बागी की बेटी

लेखक :—

(सन् १९३१ में गोरी सरकार द्वारा जब्त)

बागी की बेटी

लेखक :—

बमकाण्ड में शहीद

श्री मुनीश्वरदत्त अवस्थी

चतुर्थ संस्करण

प्रकाशक :—

मूल्य—दो रुपया पच्चीस नया पैसा ।

मुद्रक—
धरती प्रेस, वाराणसी ।

बागी की बेटी

उस समय अंधेरी रात थी। पानी बरस रहा था। बिठूर जेल की पुरानी हवालात की एकान्त कोठरी में ४४ कैदी बन्द थे। इनमें ७ स्त्रियाँ थीं और ३७ मर्द।

कोठरियों में मोटे-मोटे सींखचे लगे हुए थे और मज़बूत ताले उनके दरवाजों पर लटक रहे थे। लगभग दो पहर इसी तरह बीत गये। पहरा बदला, दूसरे सिपाही ने दरवाजे के ताले देखे और रोशनी डाल डाल प्रत्येक कोठरी के कैदियों को देखा। सभी कैदी मृतवत् पड़े थे। एक घंटा बीता, घड़ियाल ने दो बजाये। इस आवाज के साथ ही हवालाती वार्ड के बाहरी दरवाजे पर किसी ने हाथ मारा। धीरे से आवाज आई—पाण्डुरङ्ग।

इस आवाज के सुनते ही सन्तरी दरवाजे पर पहुँचा और पूछा—नम्बर?

बाहर से आवाज आई—बत्तीस।

सन्तरी ने दरवाजा खोल दिया। आगन्तुक ने वार्ड में प्रवेश किया। सिपाही उसके पीछे-पीछे हो लिया।

\+ \+ \+

उसके बदन में शरीर से चिपका हुआ अँगरखा था, पैर में मरहठी जूती, चुस्त पायजामा और सर पर दक्षिणी पगड़ी थी। शरीर बलिष्ठ था

और देखने में उसकी आयु २०-२१ से अधिक की नहीं जान पड़ती थी। उसने भी रोशनी के सहारे से प्रत्येक कोठरी में निगाह डाली। १५—२० कोठरियों के बाद वाली कोठरी के पास रुका और पहरेदार से कहा—'कैदी को जगाओ।'

कैदी जगा दिया गया। आगन्तुक ने कैदी से पूछा—क्या हाल है मि० फ्रेनर ?

उस बन्दी का शरीर गोरा और बलिष्ठ था, उसके चेहरे से रोब प्रगट होता था, उसकी उम्र २८-२६ साल की होगी। शरीर पर फौजी वस्त्र थे। ऐसा जान पड़ता था कि किसी अंग्रेजी सेना का ऊँचा ओहदेदार है। भूरी-भूरी आँखों से निकलती हुई ज्योति से वह बड़ा ही मुस्तैद और फुर्तीला प्रगट होता था। उस मरहठे सरदार के उत्तर में उसने कहा—अच्छा ही हूँ। इतना कहकर उसने अपनी गर्दन झुका ली।

+ × ×

वे सन् १८५७ ईस्वी के दिन थे, जब कि संसार के पूर्वी भाग—भारत में स्वतन्त्रता की आभा सी निकल रही थी। गुलामी के अंधेरे में रहते हुए प्राणियों के प्राणों पर बन आयी थी और चमकती हुई तलवारें आशा की ओर इशारा कर रही थीं। रक्त की धारा का प्रतिबिम्ब आकाश में अरुणिमा का रूप धारण कर रहा था। इस नवीन युग के प्रमुख पात्र धुधूपन्त नानासाहब पेशवा का कानपुर और उसके आसपास अधिकार हो चुका था। बिठूर उसकी राजधानी थी। वीर सेनापति तांत्याटोपी ने झाँसी की महारानी लक्ष्मीबाई की सहायता से कालपी के मैदान में ले--बौकर को मैदान से भगा दिया था। बौकर के सहायक फ्रेनर साहब तथा उनके २६ साथी गिरफ्तार करके बिठूर भेजे गये थे। कानपुर के युद्ध में पकड़े गये सैनिकों के साथ कर्नल फ्रेनर अपनी आयु के दिन बिठूर जेल में व्यतीत कर रहे थे। उस मरहठे सरदार ने फ्रेनर

से और प्रश्न नहीं किये। वह उदासीन की भाँति जेल के बाहर हो गया।

× × ×

दो-चार दिन इसी प्रकार और बीत गये। नाना साहब पेशवा अपनी सेना सहित दिल्ली की ओर चले गये। सेनापति ताँत्या पहिले ही ग्वालियर जा चुका था। अप्पा साहब कानपुर से दूर, राज्य की सीमा पर खीमा लगाये पड़े थे। नाना साहब के छोटे भाई रावसाहब बिठूर की रक्षा के लिए रह गये थे। एक दिन दोपहर के समय जेल के पहरेदार ने दरबार में आकर सूचना दी कि महाराज, सभी कैदी हवालात से गायब हैं।

रावसाहब यह सम्बाद सुनकर आहत से हो गये। उनके मुँह से कोई शब्द नहीं निकला और वे सिंहासन पर लेट गये। जवानों से भरे मरहठा-दरबार में सन्नाटा छा गया।

इतने में "कुमारी की जय" के गगन भेदी शब्द सुनाई दिये। दरबारी उठ खड़े हुए और पेशवा की एकलौती पुत्री के स्वागत के लिए उन्होंने मस्तक झुका लिये।

वीर नवयुवक की भाँति सर पर मराठी पगड़ी और कमर में तलवार लटकाये मैना ने दरबार में प्रवेश किया। आते ही उसने अपने चाचा से उदासीनता का कारण पूछा। समाचार सुनने पर उसने वेदान्ती की भाँति मुस्करा कर कह दिया—ये लोग अब जिस पाश में बँध गये हैं, वे जेल की जंजीरों से बहुत अधिक मजबूत और टिकाऊ हैं।

× × ×

कर्नल फ्रेनर वाली कोठरी में आज भी एक कैदी बन्द है। वह मर्द नहीं स्त्री है। उसका उन्नत ललाट इस बात की गवाही दे रहा है कि कैदी किसी उच्च परिवार का है और यद्यपि इन दिनों कष्टों के कारण

उसका मुख उदासीन है तथापि यह प्रकट हुए बगैर नहीं रहता कि इसने भी कभी अच्छे दिन देखे हैं।

हवालात के दरवाजे पर किसी ने पहरेदार को पुकारा। दरवाजा खोला गया और अंग्रेज सेनापति ने भीतर प्रवेश किया।

सेनापति ने बन्दी की कोठरी के सामने जाकर कहा–'तुमको मृत्यु-दण्ड की आज्ञा हुई है। तुम मरने के लिये तैयार हो।'

'किस अपराध के बदले?'—उस स्त्री ने प्रश्न किया।

व्यङ्ग की हँसी हँसते हुए सेना पति ने उत्तर दिया—'नहीं जानती, तुम अंगरेजी सरकार के बागी सेनानी की लड़की हो!

'किन्तु मैं तो बागी नहीं हूँ!' स्त्री ने पुनः पूछा।

'हो सकता है कि तुम बागी न हो, लेकिन हमारी सरकार विषवृक्ष बना रखने की कायल नहीं है।'

'किन्तु सरकार पर कुछ मेरे एहसान भी तो हैं, क्या उनके बदले प्राण-भिक्षा नहीं मिल सकती? फ्रेनर! क्या दो मास पहले के दिन भूल गये। तुम्हारे ऐसे बीसियों सैनिकों की जान के बदले क्या सरकार एक भी जान नहीं बचा सकती?''

'कैदी, तुम्हारा एहसान हमपर है और है छोड़े गये सैन्कों पर। हमारी सरकार को इससे क्या गरज?'

नत मस्तक हो मैना ने कहा—'तो तुम्हीं दया करो और हमारे प्राण बचा दो।'

× × × ×

तुम हिन्दुस्तानी, कर्त्तव्य और दया को नहीं पहचानते। इसलिये तुमको बताना पड़ेगा कैदी! दया और कर्त्तव्य साथ साथ नहीं रह सकते। शत्रु पर दया दिखाने का अर्थ है मूर्खता, युद्ध में दया करने का अर्थ है कायरता। और बन्धन में पड़े हुऐ शत्रु पर दया का अर्थ है

कर्त्तव्यहीनता। हम अँगरेज यदि तुम्हारी भाँति कर्त्तव्य और दया को साथ साथ रखते तो कभी के विलायत लद गये होते। हम कम्पनी वालों का भारत आने का कारण है "सम्पत्ति-प्राप्ति।" जिस प्रकार हमारा उद्देश्य सिद्ध हो उसी का नाम कर्त्तव्य है। कर्त्तव्य पालन करते रहने के कारण ही हम अपने देश से भारतीय माल को देश निकाला दिला सके। भारत में अपना माल खपा सके। कोठीदार हुए, जागीरदार हुए और मुल्कदार भी हो गये। हिन्दुस्तानियों की बगावत का खातमा हम लोग कर्त्तव्य पालन से ही कर सके। आज तुम्हारी शक्ति को तहस नहस करने का श्रेय हमारे कर्त्तव्य-पालन को ही है। नन्दकुमार, टीपू, सिराजुद्दौला, बाजीराव, गंगाधरराव आदि-आदि को पराजित कर सकने का कारण दया नहीं, "कर्त्तव्य" है।

कैदी ने भी सर झुकाये फ्रेनर की बातों को दोहरा दिया—'सच है कि हमारी दया, धर्म और फूट ने ही पृथ्वीराज के हाथों भारत खो दिया।'

तीन दिन और बीत गये। चौथे दिन जंजीरों से जकड़ी हुई मैना, स्वाधीनता के उपासक नानासाहब की एकलौती कन्या मैना, पराक्रमी महाराज शिवाजी के वंशज बाजीराव पेशवा की पोती मैना, अँग्रेज सिपाहियों की संरक्षता में नीम के पेड़ से बाँध कर जिन्दा जला कर राख कर दी गई! तेज चलने वाली वायु से उड़ उड़कर आज भी वह राख कह रही है—

'कर्त्तव्य और दया साथ-साथ नहीं रह सकते।'

—:*:—

स्वदेश के लिये

आज उस दिन पार्क में पकड़े गये असामी का मुकदमा है। उसकी आयु २६–२७ वर्ष की है। उसका सारा शरीर रूखा किन्तु मुख-मण्डल कान्तिमय है। आँखों से ज्योति फूटी निकलती है, मस्तक चम-चम कर रहा है। जाने क्यों उसे देख कर हृदय में कुछ प्रेम उत्पन्न होता है। उसका नाम रासियो पेटिट है।

रासियो पेटिट का नाम परिचित सा है। उसे देखने और पहिचानने वालों की संख्या चाहे कम हो, किन्तु हिलेना प्रान्त का कदाचित् कोई ऐसा अभागा प्राणी होगा, जिसने उसका नाम न सुना हो। वह एक साधारण कुलोत्पन्न था। उसका पिता हद दर्जे का शराबी था। बेचारा करे क्या? दिन में १० घण्टा जुटकर मिल में काम करने के बाद जब वह घर आता था तो उसके घर में मन बहलाने और थकावट दूर करने का और कुछ जरिया नहीं था। रूस के मजदूर और किसानों की यही तो दशा है कि उनसे काम लेने के लिये, जिसे देखो वही चला आता है। लेकिन थकावट में उनकी खबर लेने वाला, कष्ट में उनसे दो बातें पूछने वाला कोई भी तो नहीं दिखाई देता। कहते हैं शराब पीने से उनकी थकावट दूर हो जाती है, उनका दुःख कुछ समय के लिए भूल जाता है, इसीलिये तो वह लोग अपना पेट काट-काट कर भी कलार का पेट भरते हैं। पेटिट की माँ अपने पति की इस लीला से मन-ही-मन जलती और विशेषकर उस समय जब कि वह मतवाला होकर उस अस्थिचर्मावशिष्ट को बिना बात की

बात में डण्डों से पीटने लगता; किन्तु वह उसका इलाज करने में असमर्थ थी।

पेटिट के दो भाई और एक बहन और थी। पेटिट सबसे बड़ा था, उसकी आयु १२ वर्ष की थी। माँ बेचारी लाख प्रयत्न करने पर भी अपने बच्चों तक को आराम से नहीं रख पाती थी। बोतलवासिनी की कृपा से उसके पास इतना पैसा बच ही नहीं पाता था कि वह बच्चों के लिये यथा योग्य दूध तक दे सके। यह दशा केवल उसकी ही न थी वरन् सारा अड़ोस-पड़ोस और लगभग सारा देश ही इसी हवा में बह रहा था। छोटे-छोटे गाँव में भी कलारों की दुकानें थीं। संध्या को वहाँ पर मेला सा लग जाता और कभी-कभी तो ग्राहकों की ठेला-ठेली में गाली-गलौज और मार पीट तक की नौबत आ जाती। रात को शोरगुल तो नित्य का नियम हो गया था। पेटिट इसी कारण अशिक्षित ही रह गया था।

× × × ×

१४ वर्ष की आयु में ही पेटिट के पिता का देहान्त हो गया। उस समय वह भी गृहस्थी के गढ़े को भरने के लिए मिल में जाने लगा था। अपने मित्रों की प्रेरणा से पेटिट ने पढ़ना आरम्भ कर दिया था, थोड़े ही समय में वह साधारण पुस्तकों को पढ़कर उनके भाव समझने लग गया। एक दिन वह अपने घर एक पुस्तक लेकर गया, जिसमें रूस के गरीबों की दुर्दशा और जार की उदासीनता का चित्रों द्वारा परिचय कराया गया था।

पेटिट के पिता का देहान्त हो चुका था। अब घर का मालिक वही था। वह शराब नहीं पीता था। इससे उसकी माँ समझती कि उसकी चढ़ती उम्र है, मिल का श्रम उसे अखरता नहीं है। जिस दिन वह पुस्तक लेकर आया, उस दिन संध्या को बाहर फिरने भी नहीं गया। पुस्तक खोलकर पढ़ने लगा। माँ ने कौतूहलपूर्ण दृष्टि से उसे देखा और पेटिट के पास खड़ी होकर कुछ क्षण तक पुस्तक के चित्र देखती रही। न जाने

क्यों थोड़ी देर में उसका भाव इस प्रकार बदल गया जैसे किसी भावी आशङ्का से उसका दिल दहल गया हो। उसने कहा—'पेटिट, क्या तुम पढ़ लेते हो ?'

'हाँ माँ! मैंने अपने मिस्त्री से पढ़ना सीखा है।'

माँ ने एक ठण्ढी साँस ली। पेटिट ने माँ की ओर देखकर किञ्चित मुस्करा कर पूछा 'क्यों माँ ?'

अब तो माँ आँसू न रोक सकी। उसने कहा—'बेटा, ईश्वर के लिए बुढ़ापे में मेरी जान संकट में न डालो।'

पेटिट ने प्रश्न किया—माँ, क्या मैं तुम्हारी जान संकट में डाल रहा हूँ ?

माँ ने उत्तर दिया—जानते नहीं हो ? पढ़े-लिखे आदमियों को जार निहलिस्ट कहकर फाँसी दे देता है या साइबेरिया भेज देता है।

लापरवाही से पेटिट ने कहा—तुम पागल हो गई हो माँ। हमारे मिल में तो बहुत से बाबू हैं, सभी पढ़े-लिखे हैं, लेकिन कोई भी तो साइबेरिया नहीं भेजा गया।

'मैं क्या जानूँ बेटा, जो सुनती हूँ वही कहती हूँ। कहकर बुढ़िया ने संतोष की साँस ली। कुछ देर रुककर फिर पूछा—पेटिट, इस पुस्तक में क्या लिखा है ? पेटिट उत्साह से माँ के पास सरक गया और चित्र दिखा-दिखा कर समझाने लगा। गरीबों के दैनिक जीवन, उनके कठिन परिश्रम, उनके अशान्तिमय वातावरण और राज्य की उदासीनता तथा उस अवस्था के लिये परोक्ष रीति से शासनकर्ताओं का चित्र देखकर माँ को रातभर नींद नहीं आई। उसे मानों अपनी अवस्था का ज्ञान हो गया हो। वह नित्य ही उसी परिस्थिति में समय बिताती थी, किन्तु उसकी ओर से अनभिज्ञ सी थी। वह रात उसके लिए एक नई रात थी, मानो वह किसी दूसरी दुनियाँ में पहुँच गई हो। पति के समय का अशान्त वायुमण्डल उसकी आँखों के सामने आ गया। इधर दो वर्ष से उसके घर में शान्ति

का राज्य था, वह अशान्ति की स्मृति से ही भयभीत हो गई। अपनी हाथों से उसने आँखें बन्द कर लीं।

इस घटना को दो वर्ष और बीत गये। पेटिट के पड़ोसियों को उसके घर की शान्तिमय स्थिति देखकर कुछ अनोखी सी बात जान पड़ती थी। उन्हें पेटिट पर कुछ ईर्षा-सी होने लगी। पेटिट पड़ोसियों की दृष्टि में अनोखी-सी चीज था। निर्लज्जतापूर्ण कार्यों में रंगरेलियां न मनाने और भाग न लेने के कारण वह पेटिट को अभिमानी समझते थे। इधर पेटिट के घर दो चार पढ़े-लिखे आदमी आने-जाने लगे। उसकी मां कभी तो उनके आने पर कुढ़ जाती, किन्तु कभी-कभी वह कहने लगती कि बेचारे कितने सीधे बालक हैं। अभी निरे बच्चे ही तो हैं। देखो न, मां कहते-कहते उनका मुँह नहीं थकता। पेटिट को कितना प्यार करते हैं? इन विचारों के आते ही उसका हृदय वात्सल्य-स्नेह से भर जाता और वह कुछ क्षण के लिए बेसुध हो जाती क्रमशः वह बच्चों के घर आने के लिये आदी हो गई और फिर एक दिन तो वह आ गया, कि उन लोगों के घर न आने पर वह कुछ उदास दिखाई देती। पेटिट के घर आनेवालों में हेनरी लाक्सो, वोपा और पेडरिन मुख्य थे। पेटिट के साथ जब यह सभी जमा होते तो प्रायः पुस्तकें पढ़ते और उनपर वाद-विवाद किया करते। हेनरी अपनी तर्कपूर्ण भाषा में जब अपने विचार प्रगट करने लगता तो उसकी भवें तन जातीं, नेत्र लाल हो जाते। उसके इस रूप के सामने दूसरों को कुछ बोलने का साहस ही न होता। रूस के राज्य तन्त्र की आलोचना करते हुए उसने कहा—दूसरे देशों के विप्लव में और हमारे देश के विप्लव में अन्तर होगा। फ्रांस और अमेरिका की क्रांति में प्रयोग किये गये उपाय पूर्ण-रूपेण अपने देश में व्यवहृत नहीं किये जा सकते, क्योंकि वहाँ की परि-स्थिति और अपनी परिस्थिति में बड़ा अन्तर है।

पेडरिन ने उत्तर दिया—'मैं भी तो यही कहता हूँ। हां हमारे मत से इतनी बात और भी आवश्यक है कि अपने कार्यकर्ताओं को इस ढङ्ग से

नियुक्त करें, जिसमें जार के विभाग में कुछ-न कुछ हमारे आदमी अवश्य हों। विकास और क्रांति में यही तो अन्तर है। विकास धीरे-धीरे होता है और क्रान्ति एकदम से ही स्थिति बदल देती है। हम अपने देश में क्रान्ति चाहते हैं।' पेडरिन अपने मत पर दूसरों का भाव जानने के लिए, कुछ क्षण रुक गया। जब किसी ने कुछ नहीं कहा तो वह फिर बोला—हमारे देश में क्रान्ति इस प्रकार होगी। हम अपने आदमियों को कई भागों में बाँट दें। जार के प्रति राज्य की धींगाधींगी के प्रति असंतोष उत्पन्न करने वालों का एक दल रहे, दूसरा दल जार के प्रत्येक विभाग में अपने आदमी पहुँचाने अथवा बनाने का काम करें, मजदूरों और गरीबों को संगठित करने का काम तीसरा दल करे, अत्याचारियों को भयभीत करने तथा उसके लिये अस्त्र-शस्त्र एकत्रित करने का काम एक दल के सुपुर्द हो और इसके अतिरिक्त भी एक दल ऐसा हो, जो दूसरी आवश्यक बातों का पता लगता रहे।

पेटिट ने कहा—पेडरिन आज तो तुम बड़े पते की कह रहे हो।

बूढ़ी माँ भी उनके पास ही बैठी बच्चों के लिए चाय बना रही थी। वह जितना भी समझती थी, उससे सहमत होते हुए भी भावी आशंका से उसे उचित न समझती थी, किन्तु वह चुप थी, कदाचित वह जानती थी कि बच्चे किसी बुरे मार्ग की ओर नहीं जा रहे हैं।

× × ×

पेटिट लोहे की जंजीरों से बाँध कठघरे में लाकर खड़ा किया गया। मजिस्ट्रेट ने अपनी भूरी आँखों से एक बार उसकी ओर देखा और सरकारी वकील की ओर कुछ इशारा किया। सरकारी वकील ने कहा—हुजूर, यह एक पोलिटिकल बदमाश है। आज से पन्द्रह दिन पूर्व यह हेलना के ग्रेट एशिन पार्क में सन्दिग्ध अवस्था में पाया गया। उस समय इसने सरकारी आदमियों पर गोलियाँ चलाईं, जिससे एक आदमी

मर भी गया। इसने अपना नाम बताने से इन्कार किया। किन्तु इसकी हुलिया से पता लगा है कि यह पेटिट नाम का भयानक बदमाश है, जिसको निहलिस्ट लोगों ने इस प्रान्त के भय-प्रदर्शन-विभाग का मुखिया बनाया था। यह अपनी माँ की सहायता से प्रजा में अशान्ति फैलाता था, सरकारी आदमियों के विरुद्ध षड़यंत्र रचता और उनकी हत्या कराता था। इसकी गिरफ्तारी के लिये सरकार को १५ हजार रुबल का इनाम नियत करना पड़ा था।

वकील के इस बयान को कई व्यक्तियों ने आकर दोहराया। इसके बाद मजिस्ट्रेट ने कैदी की ओर देखकर पूछा—तुम्हें क्या कहना है? कुछ सफाई देनी है?

सारी अदालत गूँज उठी। अभियुक्त ने गरज कर कहा—जिस राज्य में दगाबाज और बेइमानों की इज्जत की जाती है, जो जितना मक्कार है, उतना ही वह राज्य का प्रिय पात्र है, उस राज्य की भाषा में बदमाश शब्द गौरवयुक्त है। मुझे अभिमान है कि मैं राज्य की दृष्टि में बदमाश हूँ। जिस राज्य ने गरीबों का सत्यानाश कर दिया, जिस राज्य में काम करने वाले एक-एक दाने को मोहताज हैं, उनका तन वस्त्रहीन है, उनके शरीर में हड्डी और खाल के अतिरिक्त कुछ नहीं रहा, जिस राज्य ने प्रजा का धन लूट कर मक्कारों में, बेईमानों और बदचलनों में बाँट दिया, जिसने शिक्षा और स्वास्थ्य, शिल्प और वाणिज्य, कला और कौशल-सभी की हत्या कर दी, उस राज्य का शत्रु होना—उसके विरुद्ध षड़यंत्र करना पुण्य है, स्वदेश सेवा है। मुझे सन्तोष है कि मेरे प्रयत्न को हमारे विरोधी भी सफल मानते हैं। मैंने जो कुछ भी किया, अपने कर्त्तव्य के लिये और स्वदेश के लिए। मैं राज्य का बागी हूँ, और बागी होने में मुझे अभिमान है। प्रत्येक व्यक्ति को स्वदेश के लिए कुछ-न-कुछ करना ही चाहिये। वह 'जिये तो स्वदेश के लिए और मरे तो स्वदेश के लिए।'

मजिस्ट्रेट ने घुड़क कर कहा—बकबक मत करो और उसने फाँसी का दण्ड सुना दिया।

दहाड़ कर पेटिट ने कहा कि स्वदेश के लिए मुझे सब मंजूर है।

सिपाही उसे लेकर चल दिये। इतने में एक धड़ाका हुआ। देखा तो सारे तमाशबीन भाग चुके थे। मजिस्ट्रेट पृथ्वी पर खून से लथ-पथ पड़ा था और एक वृद्धा वहाँ पर खड़ी कह रही थी —'इसकी जरूरत थी, स्वदेश के लिए।'

—:*:—

बलिदान की भावना

यह उस जमाने की बातें हैं, जब कि आयर्लैंण्ड पराधीन था। आयरिश जाति पर उसके चचेरे भाई अङ्गरेज मनमाना अत्याचार करते थे। आयर्लैंण्ड में न केवल राजनीतिक पराधीनता ही थी, बल्कि शासन और व्यवस्था के नाम पर बेचारों की सामाजिक और धार्मिक स्वतन्त्रता भी खतरे में आ गई थी। सम्पत्तिवादी लोग आयरिश शासनकर्ताओं के पृष्ठ-पोषक हो रहे थे और पढ़े-लिखे, समझदार कहे जाने वाले व्यक्ति, पेट पालने के लिये उस मण्डली के खुशामदी टट्टू। गरीब बेचारों का न तो कोई सहायक था और न कोई बात सुनने वाला ही। भाँति-भाँति के नियम और उपनियमों की सृष्टि वहाँ के विधाता करते। धनाभाव उन मरभुक्खों की जबान बन्द कर देता। उनकी इच्छा नियमों के विरुद्ध होती, किन्तु साहस की कमी थी। वे मन मसोस कर उनके आगे सर झुका देते। धर्म और मजहब के ठेकेदार उन्हीं गरीबों को आकर शान्ति और त्याग की शिक्षा देते। उनके अकर्मण्य जीवन को पाप और पुण्य की असामयिक व्याख्या से निरर्थक और पंगु बना देते। जनता के विरोध को वे शासन-प्रणाली के विरुद्ध विद्रोह का नाम देते और जनता के इस कार्य को अधार्मिक करार देते। शान्ति और शासन का ढोल पीटने वाली सरकार की ओर से और भी कई संस्थायें थीं, जिनका काम था 'राज्य के प्रत्येक कानून को न्यायानुकूल बताना।'

× × × ×

डबलिन के पास एक छोटा सा गाँव था—'पेटर्निया' उस गाँव में एक किसान का लड़का राबर्ट्स् रहता था। कहते हैं, जिस समय वह आठ वर्ष का था तो उसके पिता ने उसे स्कूल भेजा। दो चार दिन स्कूल जाने के बाद उसने कहा—पिता जी, मैं नहीं पढ़ूँगा।

उसके पिता ने इसका कारण पूछा तो उसने बताया—कल हमारे मास्टर साहब के एक मित्र आए थे, जिनसे बात-चीत करते हुए मास्टर साहब ने कहा था, कि आज-कल की पढ़ाई में सिवाय गुलामी के और रखा ही क्या है? इसलिये पिता जी मैं गुलाम नहीं बनूँगा। उसका पिता लड़के के भोलेपन पर मुस्करा पड़ा। दूसरे दिन वह पढ़ने नहीं गया। माता-पिता के बहुत कहने-सुनने, समझाने-बुझाने, मारने-पीटने पर भी वह अपने निश्चय से नहीं डिगा। अस्तु, उस समय राबर्ट्स् की आयु १८ वर्ष की थी। वह घर का काम देखा करता था सही, किन्तु प्रति दिन अनमना सा रहता। माता-पिता, यार-दोस्त कोई भी उसके गुप्त भेद से परिचित न थे। वह स्वयं कभी किसी के पास अधिक न बैठता। घर के काम-काज से छुट्टी मिलने पर, गाँव से बाहर नदी के किनारे वह बैठा करुणारस के गीत गाया करता। धीरे धीरे उसकी दशा इससे भी विचित्र हो गई। वह काम करते-करते एकदम चौंक कर कह उठता—'क्या यह भी कोई जीवन है?'

× × × ×

गाँव वाले उसे पागल कहते, मित्रगण उसे सनकी समझते, घर के लोग यह ख्याल करते कि इसे कोई बीमारी है। एक डाक्टर ने उसे देख कर बताया—इसका मर्ज ला-इलाज है!

उसने भी धीरे से कह दिया—'होश भी जिस पर फड़क जाये, यह सौदा और है।'

कुछ दिन के बाद घर के कामों से भी उसका चित्त उचट गया। वह अपने स्कूल में मास्टर साहब के पास जाता और वहीं चुपचाप बैठा रहता

एक दिन राबर्ट्स् ने कहा—मास्टर साहब आपको याद है, जब आपने कहा था कि इस पढ़ाई में गुलामी के सिवाय और क्या धरा है !

राबर्ट्स् ने पुनः प्रश्न किया—तो क्या मूर्ख रहना अच्छा है ?

'हाँ'।

'ऐसा क्यों ?'

'इसलिये कि यदि वह राष्ट्र-प्रेमी न बन सका तो राष्ट्र-शत्रु भी तो न होगा।'

राबर्ट्स् की हृद्-तंत्री झनझना उठी। वह बोल उठा—'राष्ट्र-प्रेमी कैसे होते हैं मास्टर साहब ?'

'पराधीन देश में पले हुए बच्चे !' मास्टर साहब ने करुण स्वर में कहा—'तुम नहीं जानते इन दिनों तुम्हारे देश पर नाना प्रकार के प्रहार होते हैं। इन प्रहारों से समाज की रक्षा करने वाले को राष्ट्र-प्रेमी कहते हैं।'

'मास्टर साहब, देश के धर्मगुरु तो बताते हैं कि जन-समाज की दुर्दशा का कारण अपने कर्मों का फल है।'

'ठीक है बेटा, तुम्हारी अकर्मण्यता का कर्म ही निःसन्देह तुम्हारी सबकी दुर्दशा का कारण है। इसमें कुछ भी झूठ नहीं।'

× + × ×

रात भर पड़े-पड़े राबर्ट्स् सोचता रहा। सारी रात उसने आँखों में ही बिताई। सबेरा होते ही वह मास्टर साहब के पास पहुँचा। उसने मास्टर साहब से पूछा—'तो फिर हमको क्या करना चाहिये, मास्टर साहब ?'

'प्रत्येक नवयुवक का कर्त्तव्य है कि वह अपने पराधीन देश के उद्धार का प्रयत्न करे। तुम भी वही करो।'

'मैं क्या कर सकता हूँ ?'

'इन दिनों देश में पर्याप्त असन्तोष फैल चुका है, किन्तु साधारण

पाप और पुण्य की नीरस विवेचना में फँसा हुआ जन-समुदाय उचित मार्ग प्रदर्शन नहीं पा रहा है। सबसे पहिले तुम्हें राज्य-प्रणाली के विरुद्ध उस असन्तोष को प्रज्ज्वलित करना चाहिए, उसके बाद कुछ दूसरा काम होगा।'

बीच में ही टोक कर उस नौजवान ने पूछा—'वह दूसरा काम क्या होगा?'

"यही कि जन-समाज को समझा दिया जाय कि अधिकारों की रक्षा करना और उसके लिये लड़ना, पाप-पुण्य की परिधि से अलग की बात है। इसमें पाप का दखल ही नहीं है।"

राबर्ट्स ने आश्चर्यान्वित होकर पूछा—'क्या आप धर्मगुरुओं के विरुद्ध उपदेश देने की बात कर रहे हैं?'

'हाँ, हाँ निस्सन्देह! जो धर्म मनुष्य को—समाज को—पंगु, कायर कर्तव्यहीन बनाता है, वह धर्म नहीं ढोंग है और उसकी शिक्षा देने वाला धर्मगुरु नहीं, बल्कि पापी और पाखण्डी है'

राबर्ट्स कुछ क्षण तक सोचता रहा। इसके बाद नगर की ओर चला गया।

× × ×

उपर्युक्त घटना को बीते ७–८ मास हो चुके हैं। इस बीच उसके घर वालों ने उसकी बड़ी खोज की, किन्तु उसका पता नहीं लगा। गाँव वाले तो उसे पागल समझते ही थे। कहते, कहीं नदी में डूब गया होगा। दो-चार मास ढूढ़ने पर जब कुछ भी हाल नहीं मिला, तब घर वाले रो-धो कर बैठ रहे।

आज डबलिन में बड़ी सनसनी फैली है। अखबारों में छपा था, कि गुरुवार के दिन किसी नौजवान ने गोली से गिरजा घर के पादरी और पुलिस कमिश्नर का खून कर दिया है। एक पकड़ा गया है। उसपर कचहरी में मुकद्दमा चलेगा।

दर्शकगण ठठ के ठठ जमा होने लगे। अदालत बैठी और कई फौजी सिपाहियों के पहरे में, हथकड़ियों से कसा एक नौजवान कठघरे में खड़ा कर दिया गया। अदालत के प्रश्नों के उत्तर में उसने कहा—हम आज प्राणदण्ड को आज्ञा पाकर प्राण त्याग करेंगें। इससे हमारा प्रयोजन यही है कि देश में वलिदान की भावना का जागरण हो।

अदालत ने उसे वध कर देने का हुक्म दिया। कोई भी व्यक्ति आगे से ऐसा दुस्साहसिक कार्य न करे, इस अभिप्राय से फाँसी देने का प्रबन्ध आम सड़क के समीप किया गया।

तख्ते पर खड़े होकर अभियुक्त ने कहा—हमारा उद्देश्य देश को पतन से बचाना था। मुझे सन्तोष है कि मैंने अपने देश के दो शत्रुओं का नाश कर दिया।

जल्लाद की रस्सी खिंची और दर्शक समूह में कोलाहल मच गया।

———

ऋण परिशोध

आयरलैंड के, माइकेल कालेन्स की आयु उन दिनों १४ वर्ष की थी। इतनी छोटी उम्र में ही जब उसे अपने देश पर इङ्गलैंड के अत्याचारों की याद आती, तो वह क्रोध से पागल हो उठता। उसने अपने साथी ग्रेहम स्टीच से, जिसकी आयु १८ वर्ष की थी, कहा—क्या इङ्गलैण्ड ने पृथ्वी मण्डल के अत्याचारों का ठीका ले लिया है। संसार का कौन ऐसा देश शेष है, जिसे इङ्गलैंडवासियों की ओर से शिकायत न हो।

ग्रेहम ने कहा—तुम नहीं जानते कालेन्स! शासितवर्ग को दबाये रखना ही शासक का मुख्य कर्तव्य है।

कालेन्स को उसके समाधान से सन्तोष न हुआ। वह फिर बोला—तो क्या शासित समुदाय को दबा रखने का मतलब उसपर अन्याय करना है?

'तो तुम क्या कर सकते हो कालेन्स?' ग्रेहम ने उत्तेजित होकर कहा।

कालेन्स की आँखें बदल गईं। उसने उत्तर दिया—एक नवजवान आयरिश क्या नहीं कर सकता? ग्रेहम! तुम हमारे शरीर को देख रहे हो, हृदय तक तुम्हारी दृष्टि नहीं पहुँचती।

ग्रेहम ने प्रश्न किया—-क्रोधित होने की बात नहीं है, कालेन्स! निश्चय ही हम तुम्हारा हृदय नहीं देख पाये। तुम्हीं बताओ आखिर तुम क्या कर सकते हो?

'मैं सब कुछ कर सकता हूँ। मैं इङ्गलैंडवासियों की शैतानियत मिटा सकता हूँ। ब्याज और दरब्याज के साथ बदला ले सकता हूँ। यदि और कुछ नहीं तो कम से कम अपनी कौम के लिए, प्यारे आयरलैंड के लिए, मर तो सकता हूँ।' माइकेल कालेन्स ने आवेश में आकर कहा।

× × ×

मैंने अपने मित्र के सामने, अपनी जन्मभूमि के सामने, अन्धेरे का नाश करने वाले सूर्य के सामने, चारो दिशाओं के सामने, देश की स्वाधीनता का व्रत लिया है। उस व्रत को हमें निभाना है। पिता कहते हैं कि अभी पढ़ते रहो, मास्टर और सम्बन्धी—सबों की यही राय है, किन्तु मैं पढ़ कर क्या करूँगा? अपनी प्रतिज्ञा के यह अमूल्य दिन एक प्रकार से नष्ट होंगे। लोग सलाह देते हैं कि पढ़ने से जानकारी बढ़ जायगी, किन्तु जितनी जानकारी मुझमें है उतनी ही मेरे लिए पर्याप्त है। मेरे आयरलैण्ड पर दूसरों का शासन है और शासकवर्ग मेरी मातृभूमि को पद-दलित करता है, क्या इससे अधिक और भी कुछ मुझे जानने की जरूरत है? मेरे व्रत-पालन के लिए इतनी ही जानकारी चाहिए। जिसके प्यारे देश और देशबान्धवों का भविष्य अन्धकार में हो, वह अपने भविष्य की चिन्ता में व्रत-पालन के अमूल्य समय का नाश करे? पिता और माता, गुरु और स्नेही बृन्द! तुम्हारे इस भोले-भाले उपदेश पर अब मैं नहीं चल सकता, असमर्थ हूँ, मेरे सर पर देश का ऋण है। अपने अन्तःकरण का ऋण है। पुस्तकों! तुम हमारे ऋण-परिशोध में बाधक हो। लो, मैं तुम्हारा त्याग करता हूँ।

× × ×

माईकेल कालेन्स ने आगे कहा—हो सकता है कि आज, कल, या दस बीस दिन में मेरे प्राण निकल जायँ। उस समय भगवान के सामने खड़े होकर मैं क्या कहूँगा ? जब यहाँ मेरी जन्म-भूमि परमपिता के सामने, मेरे कृतघ्नी और व्रत-भंगी होने की फरियाद करेगी, उस समय मैं अपनी सफाई में क्या उत्तर दूँगा ? क्या यह कह देने से मेरी बचत हो सकेगी कि मैं पढ़ रहा था। नहीं, वह तो बहाना समझा जायगा। बस, अब बहुत तर्क हो चुका। अपने व्रतपालन के लिए मैं सिनफिनर बनूँगा। इस पराधीन देश में क्रान्ति से ही शान्ति होगी।

इस घटना को दो वर्ष हो गये। ग्रेहम और कालेन्स फिर उसी मकान में बैठे थे। दोनों मौन थे। कालेन्स ने निस्तब्धता भंग करते हुए कहा—क्या चुप रहने से काम चल जायगा।

ग्रेहम ने कहा—मैं पहले ही से जानता था, कि क्रान्तिकारी दल में सम्मिलित हो जाना कोई बात नहीं है। ये चालाक सिनफिनर किसी को अपने दल में तब तक सम्मिलित नहीं करते, जब तक उन्हें पूर्णरूप से विश्वास न हो जाय। जो व्यक्ति दलयुक्त होने के पूर्व कुछ काम कर दिखाता है, उसपर ही वे विश्वास करते हैं। हाँ, वह बातचीत करने में संकोच नहीं करते।

× × ×

"तो क्या करना चाहिये ग्रेहम!" कालेन्स ने प्रश्न किया।

ग्रेहम ने इसका उत्तर स्पष्ट नहीं दिया। उसने कहा—जैसा मैं करूँगा, तुम भी करते जाना।

तीसरे दिन वे दोनों एक पहाड़ी चट्टान पर बैठे थे। उनके पास दो बन्दूकें रखी थीं और दो आदमी बँधे पड़े थे। ग्रेहम ने कहा—कालेन्स

इनको कहीं छिपाने के पहिले इनकी वर्दी उतार ली जाय; किन्तु जलाई न जाय, बल्कि हम दोनों उसे पहिन लें। क्योंकि ऐसा करने से दोनों को बन्दूक लेकर सुरक्षित चले जाने की सुभीता होगी और कोई इस बात का सन्देह भी न कर सकेगा कि इन दोनों ने डण्डों द्वारा पुलिस वालों को मार कर बन्दूकें छीन ली हैं।

ग्रेहम ने उस सलाह को मान लिया और दोनों सिपाहियों को कन्दरा में छिपा कर बस्ती की ओर चले गये।

उत्तरी आयरलैंड में यह खबर बिजली की भाँति फैल गई। दो दिन बाद दूसरी खबर यह सुनने को मिली कि कन्टीन ।नामक स्थान से सिपाहियों के पहरे में भेजा गया खजाना रास्ते से ही गायब हो गया।

× × +

ग्रेहम ने देखा कि उसकी वर्दी की जेब में एक डाकेट है। वह बहुत प्रसन्न हुआ और कालेन्स से कहा—देखो, भाग्य-परीक्षा का दूसरा अवसर भी मिल गया।

दोनों कन्टीन गये और वह डाकेट वहाँ के अधिकारी को दिया। अधिकारी ने बिना विशेष पूछ-ताछ के तीस हजार पौंड तथा अपने यहाँ से तीन सिपाही और उन लागों के साथ भेज दिये। रास्ते में ग्रेहम और कालेन्स ने उन तीनों सिपाहियों को गोली मार दी और खजाना लेकर पहाड़ियों से घिरे एक सूनसान मैदान में चले गये।

आयरलैंड की सरकार ने बहुत प्रयत्न किया, किन्तु उसे लुटेरों का पता नहीं लगा। सन्देह में बीसियों पहिचाने हुए क्रान्तिकारी पकड़े गये। आयरलैंड के प्रसिद्ध जासूस जेम्स इस मुकदमे की जाँच के लिए नियुक्त किये गये, किन्तु उन्हें भी असली अपराधी का पता नहीं लगा।

कालेन्स ने ग्रेहम से कहा—भाई हम लोगों के छिपे रहने से देश की अधिक हानि है। यदि सरकार क्रान्तिकारियों को न पकड़ कर साधारण लोगों को पकड़ती, तब तो विशेष हानि न थी, किन्तु इससे तो अच्छे-अच्छे कार्यकर्ता देश से दूर होते जा रहे हैं।

माइकेल की बात ग्रेहम को पसन्द आ गई। उसने बहुत आग्रह से कालेन्स को रोका और स्वयं एक रिवाल्वर लेकर जेम्स के बंगले पर गया।

वह तलाश में था कि अवसर मिले तो जेम्स को मार दें, किन्तु वह पकड़ लिया गया। अदालत में उसने सभी बातें स्वीकार कर लीं और ब्योरेवार सब हाल बता दिया, लेकिन कालेन्स का नाम जान-बूझ कर नहीं बताया।

ग्रेहम को ७ अप्रैल को फाँसी दे दी गई।

—:*:—

आश्रयदाता

जिन दिनों शक्ति और अमन के नाम पर, आयरलैण्ड में वहाँ के निरंकुश शासक मनमानी कर रहे थे, डबलिन नगर के समीपवर्ती ग्राम में लारेन्स नाम का गरीब मनुष्य रहता था। उसका इकलौता बेटा था क्लालेन्स। अपने बचपन की अवस्था में वह स्कूल पढ़ने जाता। वहाँ अपने मास्टरों द्वारा प्रायः सुना करता कि आयरिश बड़े ही कायर होते हैं। अपनी किताबों से इस विषय में राय लेता तो वहाँ भी उसे वही उत्तर मिलता। होते होते उसकी आयु चौदह वर्ष की हुई और न जाने क्यों उसके मन में यह भावना उत्पन्न हुई कि किताबों की यह बातें सत्य नहीं हैं। वह सोचता कि क्या कोई भी सम्पूर्ण जाति और पूरा देश कायर हो सकता है? उसे आश्चर्य होता और तुरन्त ही उसके मुँह से निकल पड़ता कि ऐसा सम्भव नहीं। वह अपने पूर्वजों के कलंक कालिमा पर लज्जित होता, किन्तु उसका हृदय पूर्वजों पर आरोप लादने के राजी न होता। वह चचंल प्रकृति का था। अपने सहपाठियों से इसकी चर्चा करता, तो वे उसकी हँसी उड़ाते। एक दिन उसने अपने पिता से इस सम्बन्ध में चर्चा की। उस बूढ़े ने उत्तर दिया--बेटा! हमलोग गरीब हैं, हमलोगों को इस प्रश्नोत्तर में नहीं पड़ना चाहिए।

पिता के उत्तर से उसके हृदय में संतोष के बदले असंतोष बढ़ गया।

पिता की पहेली को वह समझ न सका। उसकी आयु बढ़ने के साथ साथ ही हृदय के प्रश्न भी बढ़ने लगे।

× × ×

आयरलैंड में स्वाधीनता की लड़ाई छिड़ चुकी थी। शासन के विरुद्ध प्रायः दबी भाषा में और कहीं पर प्रत्यक्ष रूप में विरोध होने लगा था। डबलिन में किसी नये सरकारी कानून के विरुद्ध सभा होने वाली थी। कालेन्स भी इसी में सम्मिलित होने के लिये गया था। दो-एक भाषणों के उपरान्त कालेन्स ने वक्ता से अपने हृदय में वर्षों से खटकने वाले प्रश्न को छेड़ दिया। उसने कहा—जिस जाति और देश में कायरों के अतिरिक्त वीरों का कभी जन्म ही नहीं हुआ, जहाँ के निवासी गुलामी की हवा में ही पैदा होते और मरते रहे, उनके मुँह से स्वतंत्रता की बातें सुनकर हँसी आती है।

वक्ता ने उत्तर दिया—ओ पराधीनता के मुक्त वातावरण में जन्म लेने वाले आयरिश शेर! तुम्हें अपनी जाति का ज्ञान नहीं है। तुम सम्राज्य-सत्ता के मदमाते, झूठे इंगलैंडवासियों तथा उनके चरण-सेवक, कुलकलंक आयरिशों के लिखे हुए इतिहासों पर विश्वास करते हो। तुमने यूरोप-विजयी ब्रामले को नहीं सुना, हापर्टन की कहानी नहीं सुनी! यह लोग कौन थे?—आयरिश!

कालेन्स अपने स्थान पर चुपचाप खड़ा वक्ता की बातें सुन रहा था इतने में पुलिस के अफसर ने आकर वक्ता को बाँध लिया।

जाते-जाते वक्ता ने फिर कहा—किसी भी जाति को पराधीन रखने वाले नर-पिशाच, उस जाति की भाषा, भाव और इतिहास को नष्ट कर देते हैं।

पुलिस के सिपाहियों ने उसका मुँह बन्द कर दिया और घसीटते हुये उसको ले गये ।

× + ×

कालेन्स का विद्यार्थी-जीवन समाप्त हो चुका था। उसका बाप उससे कुछ कमाने के लिए आग्रह करता था। काम की खोज में एक दिन फिर ह डबलिन गया। वहीं उसने रिचर्ड के सजा पाने की खबर अखबारमें वपढ़ी। रिचर्ड को, एक मास पूर्व, डबलिन की सभा में, एक व्यक्ति के प्रश्नों के उत्तर देने के कारण राजद्रोह के अभियोग में दण्ड मिला था। कालेन्स का माथा ठनका और उसको सभा की घटना याद आ गई। काम खोजने की फिक्र उसके दिमाग से उड़ गई और वह सोचने लगा कि यह कैसा शासन है, जो विद्यार्थियों को गलत बातें सिखाता है और सच कहने वालों को दण्ड देता है! ऐसा शासन क्या उचित हो सकता है! और शासितवर्ग! कालेन्स के अन्तःकरण में कर्तव्य का प्रश्न उठा। वृद्ध पिता और माता की दीन दशा भी उसकी आँखों के सामने घूम गई। आजन्म निर्धन कष्टदायक अवस्था में रहने की मूर्ति भी उसे दिखाई दी, किन्तु उसने मन को समझाया। यदि हम दो-तीन प्राणी कष्ट झेल कर अपने देश के दो कोटि मनुष्यों का कष्ट मिटा सकते हैं तो अच्छा है कि हमलोग इसी दशा में रहें। वह उसी दिन वहाँ से अपने गाँव को वापस लौट गया।

× × ×

दस वर्ष बाद की बात है, आयरलैण्ड की ब्रिटिश सरकार और आन्दोलकों में सन्धि की चर्चा हो रही है। सरकार के प्रतिनिधि और

आन्दोलकों ने एक खरीता तैयार किया है। बहुत कुछ नाहीं-नहीं करने के बाद ब्रिटेन की सभा ने उस खरीते को स्वीकार किया।

आन्दोलकों में दो दल बन गये। आयरलैंड का डीवेलरा एक पक्ष में है; दूसरे में है फेनगार्ड। एक दल का कहना है कि सुधार स्वीकृत करने चाहिए। दूसरे की दलील है कि जिस सन्धि से जन-साधारण की स्थिति नहीं बदलती; उससे देश का क्या लाभ?

माइकेल कालेन्स इसी दूसरे दल में हैं। उसका कहना यह है कि देश सर्वसाधारण का दूसरा नाम है। इने-गिने थोड़े से आन्दोलकों का नहीं है। इने-गिने को राजनैतिक अधिकार मिल जाने से देश का लाभ नहीं हो सकता और न शान्ति ही हो सकती है।

कालेन्स ने खुला आन्दोलन छोड़ दिया है। वह अब गुप्त आन्दोलन करता है। उसके एक सहकारी का नाम ड्यूक था। अपने कार्य में उसे ड्यूकसे बड़ी मदद मिलती है। गुप्त रीति से कार्य आरम्भ करने की अड़चनों से ऊबकर एक दिन ड्यूक ने कालेन्स से खुले कार्य करने की बात कही, तो कालेन्स ने उत्तर दिया—हमारे देश में राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं को दण्ड मिलते हैं, अतएव हमें चुपचाप काम करना ही ठीक है।

\+ \+ \+

कालेन्स के पास इन दिनों आन्दोलन के सभी साधन हैं। उसके नाम से समाचार पत्र निकलते हैं, विज्ञप्तियाँ प्रकाशित होती हैं, समय समय पर छिटफुट युद्ध भी हो जाते हैं, किन्तु पुलिस को कुछ भी पता नहीं लगता। एक दिन पुलिस को न जानें कैसे कालेन्स के घर का पता लग गया और उसने उस दफ्तर को जाकर घेर लिया। नीचे टाइपराइटरी की दूकान है, ऊपर कालेन्स बैठा काम कर रहा है। पुलीस के सिपाहियों ने सीढ़ी पर पैर रखा ही था कि ऊपर से बन्दूकों के फैर होने लगे। दो सरकारी

अधिकारी किसी भाँति ऊपर पहुँचे। देखा, वहाँ न कोई मनुष्य है न सामान।

कुछ वर्ष इसी भाँति खेल खेलते बीत गये। कालेन्स की गिरफ्तारी के लिये बीसियों बार प्रयत्न किये गये, किन्तु वह इसी प्रकार बाल-बाल बचता रहा। न तो कालेन्स ही पुलिस के हाथ पड़ा और न उसके साथी ही।

राष्ट्रीय सरकार ने भी इस दल को बढ़ने न देने के लिये कुछ कम उपाय नहीं किया। अन्त में वह समय आया, जब ब्रिटेन से दूसरा समझौता हुआ और माइकेल कालेन्स तथा उसका दल विजयी हुआ।

२५ वर्ष की मुद्दत बीत गई। कालेन्स का घर अब भी उसी स्थान पर वैसा का तैसा—गरीबी दशा में कायम है। लेकिन कालेन्स? वह तो अब बदल गया है। वह है इन दिनों गरीबों का सर्वस्व, आश्रयदाता और प्राण, कालेन्स।

—:*:—

भीषण प्रतिकार

मई सन् १८६६ की बात है। रूस के सिंहासन पर जार निकोलस आसीन थे। सेन्टपीटर्सवर्ग में बड़ी सनसनी फैली। अमीर-गरीब सरकारी नौकर और भिखमंगों तक के मुँह से यही एक बात सुनाई देती—ऐसा तो कभी नहीं हुआ। बात यह थी कि लूसेस नाम के एक निर्वासित कैदी ने ब्रुलास के सरकारी खजाने को लूट लिया और घोषित कर दिया कि 'मैं वही हूँ, जिसे आज तीन वर्ष पहिले इलीज की मदद करने के अपराध में निर्वासन का दण्ड मिला था।'

इन दिनों अन्धाधुन्ध गिरफ्तारियाँ हो रही थीं। नगर में कोई भी परदेशी आदमी बिना जमानत दिये दाखिल नहीं हो सकता था; यहाँ जानेवालों पर भी रोक थी। जरा सा शुबहा हुआ या जिसे पुलिस वालों ने चाहा पकड़ कर हवालात में बन्द कर दिया। दूसरे ही दिन उसे बन्द कमरे में बैठे हुए एक जज महाशय निर्वासन की आज्ञा सुना देते थे। यदि कोई अपराधी कभी अपराध पूछता तो डाट कर कह दिया जाता—यह देश-रक्षा कानून है, अपराध बताया नहीं जा सकता।

हजारों भले आदमियों को दण्ड मिला। १४ ता० की बात है कि मोशियों बिलमोर भी पकड़े गये। यह उत्तरी रूस के निवासी थे और व्यापारिक कार्य से सेन्टपीटर्स वर्ग गये थे। इन्होंने बहुत कहा कि हमारे पिता जापान-युद्ध में सरकार की ओर से लड़ कर मरे थे, हजारों रुपया

दिया था, मगर वहाँ कौन पसीजता ? उन्हें भी पूर्व निश्चयानुसार साइबेरिया भेजे जाने की आज्ञा हो गई।

× × ×

यद्यपि उस समय मैं बच्चा ही था, मगर मेरे जी में रहरह कर एक ही सवाल उठता था कि क्या कृतघ्नता और न्याय का ही नाम संसार है ? सच कहता हूँ, मुझे ईश्वर के अस्तित्व में भी सन्देह होने लगा। मैं सोचता कि क्या ईश्वर इन अत्याचारियों से डरता है या उसने भी अन्य कर्मचारियों की भाँति रिश्वत लेना शुरू कर दिया है। सोचते-सोचते सहसा मेरे मुहँ से निकल पड़ता (God is no where) ईश्वर कहीं नहीं है। फिर क्या मनुष्य ही सृष्टि के क्रम का जिम्मेदार है ? क्या अन्याइयों को दण्ड देना उसके ही लिए आवश्यक और अनिवार्य है ? कभी कभी मेरे हृदय में खाना-पीना और मौज करना ही कर्तव्य का अर्थ हो जाता। परन्तु फिर तुरन्त ही दिल से आवाज उठती, अत्याचार पीड़ित-होकर जीना भी क्या कोई जीवन है ? नहीं, वह मृत्यु और उससे भी बदतर है। तो क्या क्रान्ति का झण्डा खड़ा कर दूँ, राक्षसों को गोली मार दूँ, मगर इससे तो बुरी तरह प्राण जायँगे। इन लगातार विचारों के आक्रमणों से मैं बेहाल हो उठा। जितना ही मैं इनसे बचने की कोशिश करता, उतना ही न जाने कौन मुझे उन्हीं विचारों में ढकेल देता था। मैं कहता था कि वह कौन सा उपाय होगा और कौन सा शुभ-दिन होगा, जब ये अत्याचार संसार से अदृश्य हो जायँगे।

× × ×

जून के महीने में सूचना निकली कि बिलमोर नाम का एक कैदी अपने दो कैदी साथियों के सहित साइबेरिया जाते हुए रास्ते से ही भाग

गया। वह अपने साथ दो सरकारी घोड़े भी उड़ा ले गया। उसे गिरफ्तार कराने वाले को ३००० रुबल इनाम दिया जायगा। लोगों में चर्चा चली कि हथकड़ी-बेड़ियों से मज़बूत कैदी भाग कैसे गये।

आठ दिन भी न बीते थे कि एक नोटिस पर बिलमोर का नाम दिखाई दिया। लोगों ने पढ़ा तो मालूम हुआ कि जब सिपाही चारों ओर से इन कैदियों को घेरे हुए सो रहे थे और एक पहरा दे रहा था, तो इन कैदियों ने पहिले जागते हुए पर हथकड़ी का हाथ जमाया और जब वह बेहोश हो गया तो जमादार के पाकेट से चाभी निकाल कर हथकड़ियाँ खोल लीं और सिपाहियों के घोड़ों में से दो को लेकर चम्पत हो गये। अब बिलमोर का काम था देश में क्रांति कराना।

६ साल बाद तक कोई विशेष घटना नहीं घटी। गिरफ्तारियाँ और निर्वासन तथा डकैतियाँ तो नित्य की बातें हो गईं। मगर २८ जून सन् १९०५ को एक ऐसी घटना हो गई जिससे फिर सनसनी फैली। वह घटना थी मोशियों बिलमोर की गिरफ्तारी।

२७ जून की रात को सोते समय उनके एक 'विश्वासी' साथी ने उन्हें गिरफ्तार करा दिया। मैं भी उस समय उसी मकान में था। परन्तु पुलिस वाले मुझे साधारण नौकर और उस दलवाले मुझे सीधा मनुष्य समझा करते थे। बिलमोर अलबत्ता मेरी ओर एक गहरी निगाह से देखा करता था। मगर कभी कोई बात न होती थी।

बिलमोर के 'विश्वासी' का एक रमणी से प्रेम हो गया था और उसी के कारण उसका इतना पतन हो गया कि उसने अपने पकड़े जाने के बाद माफी मिलने की शर्त पर बिलमोर को पकड़वा दिया।

× × ×

मैं पहिले बता चुका हूँ कि लूसेस ने सरकारी खजाना लूटा था और

वह लूसेस के नाम से पकड़ा नहीं गया। वह दूसरे ही नाम से पकड़ा गया और बिना बिचारे ही उसे फाँसी दे दी गई। मेरे विचारों में विद्रोह उसी दिन से हो गया था, क्योंकि मैं जानता था कि लूसेस को फाँसी डकैती के अभियोग में नहीं हुई, सन्देह मात्र में हुई है, मगर मैंने उसके बाद बहुत काल तक कुछ किया नहीं।

उस समय मेरी आयु सिर्फ सोलह साल की थी। परन्तु जब मैंने देखा कि एक 'विश्वासी' ने त्रिलमोर को पकड़वा दिया है, तब तो इस देश-द्रोही से प्रतिकार के लिए मैं पागल हो उठा। मैं एक हथौड़ा लेकर चुपचाप चल पड़ा। दो दिन लगातार चलने तथा सोचने के अतिरिक्त मैंने और कुछ न किया। न खाया न पानी पिया। दो दिन के बाद मैं एक गाँव में गया जहाँ थाना था। उस समय शाम को सात बजे थे। पुलिस के सिपाही ने मुझे पकड़ा। बोला—इतनी रात तक घूमने के लिए दारोगा की मनाही है। खैर मैं एक शख्स की चौपाल में पड़ा रहा। जब दस बज गये तो एक रस्सी के सहारे थानेदार के घर के भीतर पहुँचा और हथौड़े से थानेदार का काम तमाम कर दिया। उसका रिवाल्वर और उनकी गोलियाँ लीं और १४ रुबल लिये खर्च के वास्ते। चुपचाप उसी व्यक्ति के घोड़े पर सवार हुआ, जिसके दरवाजे पर शाम को लेट रहा था और आँटर्सवर्ग पहुँचा।

उसी रात को एक डाक्टर के यहाँ पोटाशियम-क्लोरेट, मेगनेशिया, पिक्रिक एसिड आदि चीजें चुराईं। क्योंकि मैंने सुन रखा था कि कुछ चीजें और मिलाने से 'बम' बन जाता है। मेरे हृदय में विद्रोह-भावना था, और

थी प्रतिकार की इच्छा। बस, मैं फिर दस दिन बाद पीटर्सबर्ग पहुँचा और जिस भाँति मैंने उस 'विश्वघाती तथा मोशियोपिट्रोट को, जिन्होंने बिलमोर को फाँसी दी थी, मारा यह आप जानते ही हैं।

अदालत ने कड़क कर कहा कि यह विद्रोही है, इसे कुत्तों से नुचवा दो। दूसरे ही दिन कुत्तों के सामने बाँध दिया गया। जनता की काफी भीड़ थी। प्रत्येक के मुँह से यही शब्द निकल रहे थे—'ओह! भीषण प्रतिकार।'

———

चमेली का चौरा

बचपन में वह बड़े लाड़-प्यार से एक धनी साहुकार के घर पली थी। दूर-दूर के ब्राह्मणों ने आकर उसकी जन्म-कुन्डली बनाई थी और सेठजी से उसके भाग्य की सराहना की थी। सेठ जी आगन्तुकों की बातें सुनकर खिल उठते और नम्रतापूर्वक उन सभों की बात का उत्तर देते। यद्यपि चमेली सेठजी की कन्या नहीं थी, किन्तु कोई भी इस बात को न जानता था। स्वयं चमेली भी इस बात से अनभिज्ञ थी, कि वह सेठजी को वैजनाथ-यात्रा के मार्ग में प्राप्त हुई है।

सेठजी के कोई सन्तान नहीं थी, इस कारण उनका चमेली पर अपरिमित प्रेम था। जैसा कि स्वाभाविक होता है, लाड़-प्यार में एक अमीर के घर पलने वाले बच्चे प्रायः हठी हो जाते हैं। चमेली भी इसका अपवाद न थी ! चमेली जिस समय जिस प्रकार की इच्छा प्रकट करती, सेठजी तथा उनके नौकर-चाकर लाख प्रयत्न करके उसे पूर्ण करते। इस कारण चमेली के अन्तःकरण में यह बात बिल्कुल पक्की हो गई थी, कि संसार में कोई वस्तु अप्राप्य नहीं है और न कोई कार्य असम्भव ही। १३ वर्ष की आयु में चमेली का ब्याह हो गया।

× × +

मुर्शिदाबाद के नवाब सिराजुदौला की जीवन-ज्योति विदेशी वणिकों के अन्धेरे में विलीन हो चुकी थी। अब उस प्रान्त की नवाबी मनुष्य के हाथों नहीं, बल्कि एक ऐसी कठपुतली के हाथों थी, जिसको हिलाने वाले सात समुद्र पार के निवासी थे।

चमेली का भाग्य जिनके साथ बँधा था, वह उस नवाब के दरबार में गुमाश्ता थे। कहने के लिये तो वह नवाब के दरबारी थे; किन्तु जो काम उनके जिम्मे था, उसका सम्बन्ध अधिकतर विदेशी व्यापारियों के साथ था। वस्तुतः वे उन्हीं व्यापारियों के ही गुमाशते थे।

रामजीवन समझदार आदमी थे। उनके अन्तःकरण में दया भी थी। वे न्याय-अन्याय की मीमांसा भी कर सकते थे, किन्तु हृदय के दुर्बल थे। किसी न्याय रहित कार्य को स्वामी के विरुद्ध न करने की उनमें क्षमता न थी। वे धनहीन थे, ऐसी बात भी न थी, किन्तु उनमें साहस ही न था।

उस जमाने में कपड़ा बुनने वाले व्यक्तियों को कुछ धन पेशगी दिया जाता था, और वे इस बात के लिये लाचार किये जाते थे कि अपना सारा कपड़ा विदेशी व्यापारियों की ही कोठी में आकर बेचें। वे अपनी इच्छा से अपने माल का मूल्य नहीं लगा सकते थे। मूल्य का निर्णय कराना भी उन्हीं कोठी वालों के हाथ में था, जो कि उनका माल खरीदते थे।

× × ×

उस दिन चमेली के दरवाजे पर बड़ी भीड़ थी, कुछ स्त्रियाँ घर के भीतर भी पहुँच गई थीं। चारो ओर चीत्कार मचा हुआ था। छोटे-छोटे बच्चे धूप की गरमी से दरवाजे पर खड़े बिलबिला रहे थे, लेकिन कोई उनकी खोज-खबर लेने वाला न था। सबको अपनी-अपनी पड़ी थी।

बात यह थी कि गिरधरपुर में कपड़ा बुनने वालों की बस्ती अधिक थी। क़ायदे के अनुसार उन सभों को पेशगी धन बाँटा गया था, यद्यपि उनमें से बहुतों ने धन लेने से इनकार कर दिया था, तो भी उनसे जबर्दस्ती वचन लिया गया था, कि वह अपना कपड़ा कोठी में ही लाकर बेचें, क्योंकि ऐसा ही नियम था।

कल उस गाँव के बुनने वालों का कपड़ा बेचने का दिन था, किन्तु उस दिन बहुत थोड़े आदमी ही कपड़ा लेकर आये थे और जो आये भी थे, उनका कपड़ा कोठी वालों की मापके अनुसार पूरा न था। कोठी वालों ने सभी लोगों को घर जाने से रोक रखा था और अपने सिपाही भेज कर उनके घरों से जबर्दस्ती सामान लुटवा लिया था। इसी कारण गिरधरपुर के सभी स्त्री-बच्चे अपनी फरियाद लेकर रामजीवन के घर आये थे। यद्यपि रामजीवन जानता था कि उसके द्वारा निरपराध समाज के साथ अन्याय हो रहा है, किन्तु इसके साथ ही वह यह भी जानता था कि इस समय न्याय करना अपने हाथों ही प्राणघात करना है। उसपर उस गाँव के पीड़ित समाज के करुण-क्रन्दन का कुछ भी व्यवहारिक प्रभाव न पड़ा।

× × ×

चमेली ने पूछा—तुम्हारे हृदय नहीं है? तुम नहीं देखते कि बेचारे जुलाहे दिन भर मेहनत करके भी कोठी वालों के हाथ कपड़ा बेचकर अपने बच्चों के पालन करने भर का पैसा नहीं पाते। आखिर उन्हें भी जिन्दगी काटनी है, यह रोग कितने दिन तक चल सकेगा।

'मैं सब जानता हूँ, किन्तु मैं कर ही क्या सकता हूँ'—निराशा की श्वाँस लेकर रामजीवन ने कहा।

चमेली के तेवर बदल गये। उसने घायल सर्पिणी की भाँति फुफकार कर उत्तर दिया—पुरुष होकर कहते हो, क्या कर सकते हो? मैं पुरुष होती तो दिखा देती! खैर, फिर भी देखना।

रामजीवन से कुछ उत्तर न बन पड़ा। उसके मन में विचारों का द्वन्दयुद्ध होने लगा। वह सोचता, निश्चय ही मैं अपने हाड़-मांस की रक्षा के लिए सैकड़ों प्राणियों की हत्या कर रहा हूँ। साथ ही दूसरा विचार उसके मन में आता, कि यदि मैं इस स्थान पर न रहा तो जो कोई भी होगा—वही यह सब करेगा। मेरे न रहने से भी उन गरीबों का त्राण नहीं हो सकता, तो फिर क्यों व्यर्थ में अपने प्राणों को संकट में डालूँ। उसने सन्तोष से ऊपर सर उठाया, तो चमेली की मूर्ति सामने दिखाई दी।

उसके विचारों ने पलटा खाया—मेरी कायरता ने मुझे संसार की आँखों से गिरा दिया है। मेरी अर्धाङ्गिनी चमेली, जिसे मैं कल ब्याहकर लाया हूँ, उसकी नजरों में भी मैं तुच्छ हूँ। बला से, दूसरे मेरे स्थान पर आकर अपने कर्तव्य को भूल जायँ, किन्तु मैं तो अपना कर्तव्य नहीं भूल सकता। रामजीवन आज अपने समय से बहुत पहिले ही दरबार चला गया।

× × ×

इस घटना को दो मास हो गये। रामजीवन के एक दम कार्य त्याग देने पर दरबारियों को आश्चर्य हुआ, किन्तु कारण अधिक दिनों तक छिपा न रह सका। कारण का पता लगते ही धन-लोलुप व्यापारियों के नवाब

की मदद से रामजीवन को गिरफ्तार कर लिया और उसका सारा धन लूट लिया।

बेचारी चमेली बड़े असमञ्जस में पड़ी। वह बेचारी बालिका क्या जानती थी कि उसकी सहृदयता का इतना भयानक दुष्परिणाम हो सकता है?

घटना-क्रम से वह कुछ समय के लिये अधीर हो गई, वह अपना कर्तव्य निश्चित् न कर सकी। इतने में गिरधरपुर के जुलाहों ने आकर कहा—बहन, मकान छोड़ भागो, अन्यथा अँग्रेजों के सिपाही तुम्हें भी पकड़ ले जायँगे।

वह अपरिचित भविष्य से काँप उठी। उसका जीवन सुख में बीता था। गरमी की तेजी ने उसे घर के बाहर निकलने से रोका और मन ने सलाह दी कि दरबारियों से माफी माँग पति को छुड़ा ले। दूसरे ही क्षण उसके विचारों ने पलटा खाया और अपनी स्वाभाविक दृढ़ता के साथ गिरधरपुर वासियों के साथ वह घर से निकल पड़ी।

उसने अँग्रेजी हवालात पर छापा मारा और थोड़े ही परिश्रम से अपने पति को छुड़ा लिया। यद्यपि उसने रामजीवन को छुड़ा लिया तथापि वह उस युद्ध में मारी गई।

जिस स्थान पर उसने वीरगति प्राप्त की, उस स्थान पर अब भी एक चबूतरा है जो 'चमेली का चौरा' के नाम से विख्यात है।

—:o:—

प्रतिरोध

मैनर्स का असली नाम एच० हार्पर्स था। जब उसने निहिलिस्ट दल में प्रवेश किया तो दीक्षा के समय दल की ओर से उसको मैनर्स का नाम दिया गया। वह बड़ा साहसी और कार्यपटु था। अपनी कार्यदक्षता के कारण थोड़े ही समय में वह दल का मुख्य सदस्य गिना जाने लगा। सदस्यगण उसकी राय की उपेक्षा नहीं करते थे। सन् १६१६ की बात है, जब कि रूस सरकार जर्मनी से युद्ध कर रही थी, दल ने निश्चय किया कि रूस को जार के खूनी पञ्जे से मुक्त करने का यही शुभ अवसर है, और इसी अभिप्राय से दल ने अपने को कई भागों में विभक्त कर प्रत्येक के आधीन एक-एक भाग सौंप दिया। मैनर्स भी एक भाग का अधिपति बनाया गया। उसके आधीन था, विपक्षियों को भयभीत करना और विश्वासघाती सदस्यों को दण्ड देना।

उस समय डूमा के सरकारी मनोनीत सदस्य ब्रामले, प्रजा के विरुद्ध बहुत विष उगला करते थे और निहलिस्टों के लिये तो प्रत्येक क्षण अपनी आस्तीन चढ़ाए रहते थे। मैनर्स के विभाग ने उसका बध करना निश्चय किया। कौन कार्य किसके सुपुर्द किया जाय, इसका निश्चय चिट्ठी (लाटरी)

डाल कर किया जाता था। संयोगवश आमले के बध करने की चिट्ठी मैनर्स के ही नाम निकली।

यद्यपि मैनर्स का ब्याह हो चुका था, तथापि वह एक प्रकार से अविवाहित सा था! वह अपने घर न जाता था। आमले को दण्ड देने की चिट्ठी उसके नाम निकली तो उसकी इच्छा हुई कि घर जाकर माता-पिता और स्त्री से अन्तिम भेंट कर आवे।

लाख प्रयत्न करने पर भी वह अपनी उत्सुकता को संवरण न कर सका। वह घर पहुँचा। किन्तु रात दिन वह अपने कार्य-सिद्धि का उपाय सोचा करता! एक दिन उसकी स्त्री ने उसकी मूक गम्भीरता का कारण पूछा। मैनर्स ने हँस कर बहला दिया। जिस दिन वह घर से विदा हुआ, उसकी स्त्री ने पूछा—अब कब मुलाकात होगी?

मैनर्स ने गम्भीरता से उत्तर दिया—कुछ ठीक ठीक नहीं बता सकता।

अनिश्चित समय तक के वियोग के लिये वह अपने को तैयार न कर सकी और उसने मैनर्स के साथ जाने का निश्चय किया। इस प्रस्ताव को उसने मैनर्स के सामने रखा भी, किन्तु मैनर्स ने उपेक्षा की हँसी हँसकर कह दिया कि 'वीर शृङ्गार करे रण को तब नारि शृङ्गार पर ध्यान धरे ना।'

वह घर से निकल पड़ा। उस समय स्त्री के कानों में वही शब्द गूँज रहे थे। 'वीर शृंगार करे रण को······।

कुछ समय विचार करने के बाद वह बोली—इन शब्दों में कुछ रहस्य है, यह वीर शृङ्गार कैसा? दरवाजा छोड़ कर वह अपने कमरे की ओर तेजी से बढ़ गई।

मैनर्स अपने विचारों में मस्त यूराल नदी के किनारे-किनारे बढ़ता चला जा रहा था। उस बीहड़ स्थान में कदाचित उसे यह होश नहीं था कि वह कहाँ जा रहा है। तीन-चार घण्टे लगातार चलने के बाद भी न तो सुस्ताने के लिये बैठा ही और न मार्ग ही परिवर्तन किया। इतने में उसे ऐसा जान पड़ा कि कोई उसका पीछा कर रहा है। उसने रिवाल्वर तान कर पूछा—कौन है? दूसरी ओर से उत्तर आया, 'तुम्हारा साथी'।

आश्चर्य-चकित हो मैनर्स ने पुनः प्रश्न किया।

आगन्तुक इतनी देर में सामने आ गया। उसने मैनर्स का हाथ पकड़ कर प्रेमपूर्वक उत्तर दिया—मैं तो ऐसा साथी हूँ, जिसकी प्रतिक्षण आवश्यकता रहती है।

मैनर्स ने बलपूर्वक अपना हाथ छुड़ा लिया और पूर्वकथित 'वीर शृङ्गार करे रण को...' कहते हुये अपने मार्ग पर चलना आरम्भ कर दिया।

स्त्री ने आगे बढ़ कर पूछा—प्राणनाथ! यह वीर शृङ्गार शब्द में क्या रहस्य है?

मैनर्स ने उत्तर दिया—इसका उत्तर देना हमारी शक्ति के बाहर है, घोर पाप है। इतना कहकर उसने पुनः अपना रास्ता लिया।

× × × ×

सरकारी डूमा का सदस्य ब्रामले धनी व्यक्ति था। वह पीटर्सवर्ग के एक सुन्दर मुहल्ले में रहता था। उसकी एक कन्या थी, जिसकी आयु उन दिनों अधिक-से-अधिक १६ वर्ष की होगी। उसे गाना सीखने का बड़ा शौक था। स्थानीय पत्रों में 'गायक की आवश्यकता' कई मास से

निकल रही थी। दो एक गायक आये भी, किन्तु ब्रामले के अशिष्ट तथा उद्दण्ड व्यवहार से कोई टिक नहीं सका। वह अपने नौकरों को कुत्ते बिल्ली से भी बदतर समझता था। गाली और मार-पीट करना उसके लिए एक साधारण सी बात थी, किन्तु इधर १० दिन से एक महोदय आये हैं। यद्यपि उनके प्रति भी ब्रामले का वैसा ही भीषण व्यवहार होता है, किन्तु वे ऐसी अवस्था में भी डटे ही हैं। इस सहनशीलता का कारण लोग दबी जबान से बहुत कुछ कह रहे हैं। अस्तु, यह हम छिपाना नहीं चाहते कि यह गायक मैनर्स ही है। उसने ब्रामले का वध करने के लिये ही गायक का वेष बनाया था, किन्तु इसी बीच कई बार सुविधा होने पर भी अपने विचारों को कार्यान्वित नहीं किया।

\+ + +

मैनर्स की पत्नी ने सोचा—संसार में अनेकों मनुष्य हैं, सैकड़ों प्रकार के स्वभाव हैं, किन्तु इनका सा स्वभाव आज तक नहीं देखने को पाया। क्या मैनर्स पागल है? नहीं वह किसी से लड़ता नहीं, गालियां भी नहीं बकता। तो वह क्यों लक्षहीन सा है? लेकिन उसने कहा था 'वीर शृंगार करे रण को......' अवश्य ही इसमें रहस्य है। क्या रहस्य होगा? वह उस कमरे में गई, जिसमें रात को मैनर्स सोया था। उसने देखा कि चार-पाई के पास टेबुल पर एक खुली पुस्तक रखी है। उसका नाम था "Secret of the success of Japan" उसको उलट-पुलट कर देखा तो उसमें कई स्थानों पर चिह्न लगाये गये थे। जिन लाइनों के नीचे चिह्न थे; उनको पढ़ने से मैनर्स की पत्नी के दिल में गुद्गुदी पैदा

हो गई। जापानियों ने अपने देश की स्वाधीनता के लिए अनेक युद्ध-स्थलों में अतुलनीय वीरता का परिचय दिया है। मैनर्स की स्त्री की खोज समाप्त हुई। वह बोल उठी—अवश्य ही मेरे पतिदेव ने देश-सेवा व्रत लिया है। सचमुच वर्तमान रूस को वीरों की ही आवश्यकता है। वह धीरे-धीरे गुनगुनाने लगी—

जब वीर शृंगार करे रण को तब,
नारि शृंगार पर ध्यान धरे ना!

× × ×

मेरी एटरसन ने भी अपना कर्तव्य निश्चय कर लिया। निस्तब्ध रात्रि में वह घर से निकल खड़ी हुई और उसी मार्ग पर चलना आरम्भ कर दिया, जिसपर कि सबेरे पतिदेव के पीछे-पीछे गई थी। यूराल नदी की प्रलयंकारी लहरों का शोर और जंगली जानवरों की भयानक दहाड़ें उसे विपथ न कर सकीं। ५-६ घण्टे लगातार चलने के बाद, एक पेड़ के नीचे मनुष्य का सा अस्फुट शब्द सुनाई पड़ा। वह थम गई वहीं पेड़ की आड़ में—बैठ कर उन शब्दों को सुनने लगी।

स्वर उसको मैनर्स का सा जान पड़ा। वह उनके सामने जाने के लिए उठी, किन्तु कुछ सोच कर रुक गई।

भावों की उत्तेजना में मैनर्स का स्वर स्पष्ट हो गया। वह कह रहा था, कुछ भी हो, हमें तो दल की आज्ञा पूर्ण करनी ही है। देश जाति और निहलिस्ट दल का शत्रु ब्रामले किसी प्रकार नहीं बच सकेगा।

सवेरे—बड़े तड़के—वह चल पड़ा। मेरी भी उसके पीछे, छिपे-छिपे ब्रामाले के घर पहुँची।

जब मैनर्स ने सोफिया को गाना सिखाने की नौकरी कर ली, तो वह भी दासी के रूप में गुजर करने लगी। १०-१२ दिन बाद उसे इस बात का पता चल गया, कि मैनर्स सोफिया पर आसक्त हो गया है। वह इस घटना से दुःखित हुई और स्वयं ही ब्रामले को मारने का प्रण किया।

× + ×

रात नौ बजे थे। मैनर्स आराम कुर्सी पर पड़ा गहरी चिन्ता में निमग्न था। कभी-कभी कोई शब्द उसके मुँह से निकल पड़ता। धीरे-धीरे उसका स्वर साफ सुनाई देने लगा।

मैनर्स ने कहा—"सोफिया का प्रेम मुझसे छोड़ा नहीं जा सकता और उसको छोड़ता नहीं तो दल की आज्ञा और देश के कार्य को सम्पन्न नहीं कर सकता। क्या दोनों काम साथ नहीं हो सकता।"

कुछ क्षण के बाद खुद ही उसने उत्तर दिया कि नहीं। ब्रामले का खून छिप न सकेगा और अपने पिता के हत्यारे को सोफिया कैसे स्वीकार करेगी? तो क्या आत्महत्या कर लूँ? किन्तु यह भी न हो सकेगा। मैंने तो सोफिया का प्रेम बड़े परिश्रम से पाया है। उसे, ऐसे मिट्टी के मोल, फेंका नहीं जा सकता।

मैनर्स के मन में इसी तरह की एक बात आती और जाती। इसी समय एक बड़े पटाखे की सी आवाज सुनाई दी और सारे मकान में कोहराम मच गया।

मैनर्स के भी विचार भंग हुए और वास्तविक बात जानने के लिये वह दरवाजे की ओर लपका।

किसी ने कहा 'सरकार! आमले का खून हो गया।'

इसी समय किसी ने मजबूत हाथों से मैनर्स का हाथ थाम कर डपट कर कहा—'प्रेम के पथिक, यही तेरा वीर शृङ्गार है? तू ने देश के कार्य को अपने व्यक्तिगत विषय-लोलुपता से हानि पहुँचाई है, उसका दण्ड ले।'

मैनर्स ने ऊपर निगाह उठाई तो अपनी स्त्री को पुरुष वेष में देखा और कुछ कहना ही चाहता था कि उसकी स्त्री तेजी से उसको घसीटते हुए आगे बढ़ गई।

—:*:—

पश्चाताप

वह बचपन में बड़ा फुर्तीला था और जवानी में बड़ा साहसी। अपने गाँव से दो मील की दूरी पर वह रोज सबेरे पढ़ने जाता था। उसने अपने मास्टरों को कभी शिकायत का मौका नहीं दिया, इसलिए उसका अपनी कक्षा में बड़ा आदर था। कोबा को ब्याह के नाम से बड़ी चिढ़ थी। कहते हैं कि एक बार उसकी अपने माता-पिता से इसी सम्बन्ध में खटपट हो गई थी और तभी से उसने अपना घर छोड़ दिया था।

जिन दिनों उसे अपना घर त्याग करना पड़ा, उसकी आयु १७ वर्ष की थी।

कोबा की शिक्षा का अन्त आरम्भिक अवस्था में ही हो गया था। इस कारण घर छोड़ने के बाद उसे अपने पेट के लिए बड़ी मुश्किल का सामना करना पड़ा। वह अपने गाँव से दूर पीटर्सबर्ग में चला गया और वहाँ अखबार बेचने का काम करने लगा।

सबेरे उठना, मुँह-हाथ धोकर अखबार के आफिस में जाना, अखबार लाना और ११ बजे दोपहर तक उन्हें बेचबाँच कर जीवन निर्वाह का ठिकाना कर लेना, सन्ध्या समय लाइब्रेरी में जाकर पुस्तक पढ़ना, समाचार पत्र पढ़ना, यही उसका दैनिक कार्य था, इसी में वह मस्त रहता था।

खोजते-खोजते एक बार उसके पिता पीटर्सबर्ग पहुँचे। उस समय वह अखबार बेच रहा था। पिता ने पास पहुँच कर कहा—हैरिन तुम्हें लज्जा नहीं आती। तुम राबिन्स जैसे धनाढ्य के घर में जन्म लेकर गली-गली पेट के लिये चिल्लाते फिरते हो?

हैरिन ने किञ्चित उग्र भाव से उत्तर दिया। हैरिन बन्धन में पड़े रहकर मोहनभोग उड़ाने में ही लज्जा करता है। उसे पेट के लिये गली-गली चिल्लाने में लज्जा नहीं बोध होती।

तीव्र स्वर में राबिन्स ने कहा—पितृभक्ति का अर्थ है बन्धन! यही तुम्हारा धर्मपालन है हैरिन! तुम्हें जन्म देकर मैंने बड़ा पाप कमाया।

हैरिन ने बिना विचलित हुए उत्तर दिया—पशुओं की भाँति टुकड़ों पर पालन करके, उसकी नकेल मनमाफिक चलाने का नाम पितृ-स्नेह नहीं है। पितृभक्ति दूसरी वस्तु है और गुलामी दूसरी वस्तु।

और भी रूखे स्वर में राबिन्स ने कहा—तो क्या तुम्हारे कहने का अर्थ यह है कि शादी और गुलामी एक ही है?

निस्सन्देह, इच्छा के विरुद्ध शादी करने का प्रयत्न, गुलामी को आमन्त्रण देना है—हैरिन ने निर्भयता से उत्तर दिया।

पिता ने "अब भी समय है हैरिन" कह कर कुछ क्षण उत्तर की प्रतीक्षा की। जब उन्हें कुछ भी उत्तर न मिला तो वे घर वापस लौट गये।

× × ×

"निहलिस्ट" के प्रचार से उस समय की सरकार बड़ी भयभीत हो

रही थी और उसने उसकी खोज में स्थान-स्थान पर अपने जासूस नियुक्त कर रखे थे। फिर भी पता न लगता था! उसी दिन के दूसरे दिन की घटना है, जिस दिन कि "निहलिस्ट" की घोषणानुसार मिल के मैनेजर की हत्या हो गई थी।

हैरिन पर्चे लेकर मिल के फाटक पर पहुँचा। पुलिस का काफी प्रबन्ध था और प्रत्येक मजदूर की सावधानी के साथ तलाश ली जाती थी। दूर से ही हैरिन ने यह सब देखा। इतने में उसे मिल में सौदा बेचने वाला ठेकेदार दिखाई दिया। हैरिन ने तुरन्त ही पीछे घूमकर ठेकेदार को ऐसी ठोकर लगाई कि वह गिर पड़ा। हैरिन ने एक गाड़ी पर घायल राहगीर को अस्पताल पहुँचाने के बहाने ले जाकर एक मकान में बन्दकर दिया और उसका सौदा तथा लाइसेंस अपने कब्जे में कर लिया।

"निहलिस्ट" की प्रतियाँ उसने अपने समस्त अङ्ग में लपेटीं और एक कसा कपड़ा पहनकर ऊपर से ठेकेदार की वर्दी पहन ली!

पुलिस ने उसकी तलाशी ली! और वह मिल में घुसकर अपने नियुक्त एजेण्टों को प्रतियाँ दे आया।

× × ×

हैरिन पर उसके दल वाले बड़ा विश्वास करते थे। "निहलिस्ट" की स्थान-स्थान पर एजेंसियाँ बनाना, प्रतियाँ वितरण करना, साधन और अस्त्र-शस्त्र एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचाना, उसका ही काम था। इस काम में उसकी एक मात्र सहायक थी, मिस जैनी।

संसार की दृष्टि में जैनी "दी रायल सिगरेट" कम्पनी में काम करके पेट पालन करती थी। उन दिनों उक्त कम्पनी के ऊपरी भाग में हैरिन रहा करता था। पुलिस को सुराग लग चुका था कि हैरिन निहलिस्ट दल का सदस्य है। अतः उसकी गिरफ्तारी के लिए वह चिन्तित थी।

एक दिन पुलिस ने कम्पनी में घुस कर पूछा—ऊपर के कमरे में कौन रहता है ?

मिस जैनी ने उत्तर दिया—कोबा।

पुलिस ने पूछा कि इस समय क्या वह अपने घर है ? और बिना उत्तर पाये ही वह फिर बोला—मैंने सुना है कि हैरिन यहीं रहता है।

इस बार जैनी कुछ रुकी और पुलिस वाले छत पर जाने के लिये अग्रसर हुए। जैनी ने बटन दबाया, ऊपर की बिजली जल उठी और हैरिन रस्सी के सहारे दूसरी ओर कूद गया।

× × ×

हैरिन ने कहा—मैं तुमको प्यार करता हूँ जैनी ! मेरे अन्धे जीवन की तुम ही एकमात्र सहारा हो। जैनी ने इसका कुछ उत्तर नहीं दिया। उसका मुंह लज्जा से लाल हो गया। हैरिन भी कुछ समय तक मौन रहा और उसका मौन तब भङ्ग हुआ, जब जैनी ने घड़ी की ओर देख कर व्याकुलता से कहा—अब जाने दो हैरिन ! दो सप्ताह से "निहलिस्ट" मिलों में नहीं पहुँच रहा है।

हैरिन ने जैनी का हाथ पकड़ लिया और कहा—तुम नहीं जानती

जैनो, मेरे जीवन में कितनी क्रान्ति रही है। संसार के प्राणियों का जीव है प्रेम और मेरे प्राण का जीवन है प्रेमस्वरूप जैनी। दोनों बैठे रहे।

उसी दिन पीटर्सवर्ग प्रान्त के निहलिस्ट दल के अन्रंग सदस्यों की एक आवश्यक बैठक थी। सभापति ने कहा—उस दिन सभा के पास एक शिकायत आई थी और उसपर जाँच कमेटी बैठा दी गई थी। कल उसकी रिपोर्ट आ गई है और आरोप सत्य है। निश्चय ही ऐसे उच्च आदर्श-स्वरूप संस्था में ऐसे कुत्सित-कर्मी घातक हैं।

सभा के सातों मेम्बरों ने बारी-बारी से रिपोर्ट पढ़ी और निश्चय किया कि हैरिन से उत्तर माँगा जाय, कि वह जोसेफ की हत्या के लिये क्यों नहीं गया और मिस जैनी से पूछा जाय कि उस दिन का "निहलिस्ट" मिलों में क्यों नहीं बँटा ?

× + ×

हैरिन एक कुर्सी पर लेटा हुआ विचारों में तन्मय था। अकस्मात् वह बड़बड़ाने लगा। मैंने अपने बाप की नहीं सही, नहीं तो मैं राजा बनाहोता, किन्तु, जैनी !...वह भी तो मुझपर आसक्त है, मेरे ही कारण वह मिलों तक नहीं गई ! फिर, मैंने भी तो उसके साथ कम ऐहसान नहीं किया। लेकिन वह तो मेरी ही है।

× × ×

करुण-दृष्टि से उसने दरवाजे की ओर देखा। कुछ क्षण बाद आँखें फेर लीं और कहने लगा। दो मास पूर्व भी इसी प्रकार चारपाई पर कुछ सोच रहा था, उस समय भी किसी की खोज थी। आज भी विचार है

और खोज भी। किन्तु तब और अब में अन्तर है, आकाश पाताल का अन्तर है। तब उद्देश्य-सिद्धि की लगन थी, उसी का विचार था और स्वतंत्रता की, राजनैतिक स्वतन्त्रता की खोज थी। आज यह विचार है कि मूल-पथ पर किस प्रकार पहुँचू और खोजूँ उस पागलपन को। उस दिन किसी ने पुकार कर कहा था--ओ मतवाले, दुनियाँ की ओर देख कर चल। सहसा मेरी आँखें घूम गईं। ओह उस घूमने में ही तो पतन था। पुकारने वाले में आकर्षण था। उस ओर मुड़ा कि भयानक गह्वर में, रसातल में आ गिरा। मतवाला क्या छूटा, हमारी तो आत्मा छूट गई। बेहोशी से होश में आने की बात थी, किन्तु इस होश की दशा में प्राण ही लुटगया। हाय! मेरे दिल का पता नहीं है, दिमाग ढूंढ़े नहीं मिलता, प्राण से प्यारा किसी धुंधली कोठरी से हमारी ओर आँखें मटका रहा है और मुँह चिढ़ा रहा है। युवक मदोन्मत्त होकर न जाने क्या-क्या बक रहा था, उसे होश नहीं था कि कोई उसकी बातें सुन रहा है। बकते-बकते शायद थक कर उसने अपनी आँखें बन्द कर लीं।

जैनी ने हैरिन के सिर से चद्दर उतार दी। बोली—हो चुका पश्चात्ताप? हैरिन देश माता की ओर दखो। इसका बहुमूल्य समय इस प्रकार व्यर्थ न खोओ, जानते हो तुम अपने पतन का कारण?

गद्गद कण्ठ से बीच ही में हैरिन ने टोंक कर कहा—प्यारी जैनी! क्या सचमुच ही माता ने अपराधों को क्षमा कर दिया? क्या मैं उसकी सेवा के योग्य अब भी हूँ?

जैनी ने कहा—हैरिन, पहले हमारी सुन लो। तुम पूछते हो कि माता ने मुझे क्षमा कर दिया? माता ने अपने प्रत्येक पुत्र से प्रेम करती ही है, किन्तु उसका प्रेमी और सेवक पुत्र किसी के बहकावे में आकर पथ-भ्रष्ट हो जाता है, तो वह स्वयं ही उसका पश्चात्ताप करती है। हृदय रखने वाले पुत्र उसके पश्चात्ताप से स्वयं ही मर्माहत हो दुखी होते हैं और पुनः कर्तव्य-पथ पर आरूढ़ हो जाते हैं। अब पश्चात्ताप में अपना समय न खोओ और कार्य में जुट जाओ।

—:*:—

निहलिस्ट

उसकी गजब की चाल थी, हवा के झोंके से उसके सर पर के बाल उड़-उड़ कर उसकी आँखों पर आ जाते थे। याद कर लापरवाही से उन्हें-हटाता जानता था। याद कर के दिल बेकाबू हो जाता है। उसके बचपन की स्मृति में कितना आनन्द है, किन्तु उस आनन्द में भी एक नीरव वेदना छिपी है। ओह, उस जमाने में निरा बालक था। स्कूल जाता था, कुछ न कुछ पढ़ता भी था, किन्तु न जाने क्यों वह उन दिनों कुछ उदास सा रहने लगता था। एक दिन घेर-घार कर मैंने उससे उसकी उदासीनता का कारण पूछा था। उसने आना-कानी की थी। मेरे बहुत सताने पर वह धोखा देकर मेरा हाथ छुड़ा कर भाग गया था—वह दिन ज्यों का त्यों मेरी आँखों के सामने नाच रहा है। तब वह मानव की मूर्ति था और अब है सफलता की प्रतिभा। तब उसके व्यवहार से मैं उसे पागल समझता था और अब मेरा अन्तःकरण मुझे ही पागल घोषित करता है। उस दिन के राविन्सन और आज के राविन्सन में बड़ा अन्तर है। उस व्यक्ति की आँखों से दो बूँद आंसू टपक पड़े। भावावेष में उसने आंसुओं को पोंछा नहीं और अपने साथी से कहा—उन दिनों राविन्सन एकमात्र मुझसे ही प्रेम करता था, जान पड़ता था कि उसके प्रेम का एकमात्र आधार मैं हूँ। आज मेरे

भाग्य पर सैकड़ों, हजारों ने अधिकार कर लिया है। राबिन्सन अब केवल हैक्सले की सम्पत्ति नहीं रहा, वह किसानों और मजदूरों में बट गया है। किंचित रुक कर हैक्सले ने, मानों किसी भूली बात की स्मरण आ जाने की भाँति कहा—राबिन्सन जिन दिनों स्कूल में पढ़ता था वह अपनी कक्षा के तेज विद्यार्थियों में था। वह कभी फेल नहीं होता था। उसके अपर सेकेण्डरी में अचानक फेल हो जाने से उसके पिता बड़े अचम्भित हुए, वे दुखी भी हुए। किन्तु उन्होंने राबिन्सन से कुछ कहा नहीं। राबिन्सन उन दिनों कुछ उदासीन रहा करता था, माता-पिता और दूसरे दर्शक यही जानते थे कि इसका कारण उसकी असफलता है। पिता ने एक दो बार समझाया भी—बेटा ! सफलता और असफलता तो भाग्य की चीजें हैं, मेहनत करना अपने हाथ की बात है। राबिन्सन को इस उपदेश से संतोष हुआ भी या नहीं, किन्तु इतना अवश्य है कि वह मुस्कराकर वहाँ से चल देता था। उसकी मुस्कान में रहस्य था और शायद वह हँसता इस बात पर कि बेचारे बृद्ध पिता उसकी मर्म-वेदना को क्या जानें ? मैं इतना अवश्य जानता था कि असफलता उसकी उदासीनता का कारण नहीं है। किन्तु असली कारण से मैं भी अनभिज्ञ था।

पुलिस के दारोगा से राबिन्सन ने दोस्ती कर ली थी। प्रायः वह उन्हीं के घर आया-जाया करता था। यह बात गाँव वालों को अच्छी नहीं लगती थी। क्योंकि दरोगा के राक्षसी कार्यों से आस-पास की जनता तबाह थी। किन्तु किसी का इतना साहस नहीं था कि राबिन्सन को दरोगा से मिलने को मना करता, उससे सब डरने लगे। मैं पहले ही कह चुका था कि वह

मुझे प्यार करता था। एक दिन मैंने गोल-मोल शब्दों में दरोगा की दोस्ती से रोका। उसने कौतुक से मुँह चिढ़ा दिया, मैं डर गया और उस दिन से मैंने उससे इस सम्बन्ध में कोई बात नहीं कही। उसके स्कूल जाने में कमी आ गई और सब लोगों को निश्चय हो गया कि अब इसके शिक्षा संचय का समय बीत गया। कुछ दिन बाद उक्त दरोगा जी का तबादला हो गया। राबिन्सन भी गाँव से २-३ मील दूर तक उन्हें पहुँचाने गया था। राबिन्सन उन्हें भेज कर लौटा, किन्तु उसके चेहरे पर पहले की सी उदासीनता न थी और न कुछ ऐसा ही भाव प्रदर्शित होता था जैसा कि एक मित्र को अपने साथी के वियोग के समय हुआ करता है। वरन् वह पहले से अधिक प्रसन्न था मानो दारोगा के जाने से उसे कुछ मिल गया। सचमुच ही उसका शिक्षा-जीवन समाप्त हो गया। अब वह मार्नी के घर आया जाया करता है और सबेरे शाम उसी के साथ घूमने-घामने भी जाता था। मार्नी एक साधारण स्थिति के व्यक्ति का इकलौता बेटा था, उसकी आयु राबिन्सन से एक-आध वर्ष अधिक होगी। वह गाँव से १८ २० मील दूर केम्सिनवर्ग के कालेज में पढ़ता था और उन दिनों छुट्टी में घर आया था। एक दिन मार्नी और राबिन्सन दोनों पास ही अठखेलियाँ करती हुई नदी के किनारे गये थे, मुझे न जाने क्यों उस दिन उनके साथ लगने की सूझी। मेरी इच्छा थी कि आज एकान्त में उसके इस परिवर्तन की चर्चा करूँगा और उसका कारण पूछूँगा। जहाँ तक स्मरण होता है, यही कारण था कि मैं उसके पीछे नदी तक चला गया। उसने मुझे देखा नहीं। नदी पर पहुँच कर मैंने जो कुछ देखा उसपर पहले तो विश्वास नहीं हुआ। मैंने रूमाल से अपनी आँखें साफ

कीं, फिर १-१।। मिनट तक देखता रहा, मैं भयभीत हो गया। मैं पीछे की ओर लौटा ही था, कि इतने में एक धड़ाके की आवाज हुई और मानो उसकी आवाज मेरे ही कानों में समा गई। मैं भयभीत तो था ही चिल्लाकर गिर पड़ा और अचेत हो गया।

× × ×

मेरी आँखें जिस समय खुलीं उस समय कुछ अंधेरा हो चुका था। राविन्सन और मार्नी मेरे पास कुछ चिन्तित से बैठे थे। मुझे होश में आया देख कर वे कुछ कहना ही चाहते थे कि मैंने प्रश्न किया--मैं कहाँ हूँ ? इसका उसने कोई उत्तर न दिया वरन् खिलखिला कर हँस दिया। मुझे अपनी दशा पर पश्चात्ताप हुआ। मैं इतना कायर क्यों हूँ ? वह घटना आज तक मुझे नहीं भूली और सच पूछो तो उसने मेरे जीवन में भयानक परिवर्तन कर दिया। मेरी आज की दशा का सीधा तार उसी घटना से लगा हुआ है। उस दिन से मेरे अन्तः करण में कितना बल आ गया। दो महीने हो गये, इस सम्बन्ध में मार्नी और राविन्सन किसी से भी मेरी कोई बात नहीं हुई। उस दिन मैं बाग में था, राविन्सन उधर से जाता हुआ दिखाई दिया। मैंने उसे पुकारा, उसने बहाना नहीं किया। मेरे पास आ गया। मैंने कहा--राविन्सन ! आज तुम नहीं जा सकते। मैं बिना यह जाने तुम्हें जाने न दूँगा कि उस दिन तुम नदी के किनारे क्या कर रहे थे ?' मानो वह भी मुझसे बातें करने का अवसर खोज रहा था। उसने उत्तर दिया—यदि तुम भी बता दो कि तुम नदी के किनारे क्यों गये थे और फिर बेहोश कैसे हो गये ?' मैं उसे प्यार करता

था। उसे बहला न सका, हृदय ने बहलाने की आज्ञा नहीं दी, फौरन् ही कह बैठा—तुम्हें नदी के किनारे जाते देख तुम्हारे पीछे गया था, मेरी इच्छा थी कि तुमसे तुम्हारी उदासीनता का कारण पूछूँ। किन्तु वहाँ जाकर तुमने तमन्चा निकाला, मैं आश्चर्य में आ गया कि तुम्हारे पास तमन्चा कहाँ से आया और तुमने रखा ही क्यों? मैं इसी उधेड़ बुन में था कि तमन्चा छूटा और मुझे मालूम हुआ कि वह मुझे ही लक्ष करके चलाया गया है। बस, मैं अचेत हो गया। राबिन्सन ने गम्भीर होकर उत्तर दिया कि तुम्हारा ही उत्तर मेरा उत्तर है। फिर उसने कहा—देखो, किसी से उस घटना का जिक्र न करना। मैंने अच्छा कह दिया। मैं आगे और पूछने ही वाला था कि तुमने तमन्चा कहाँ से पाया कि इतने में उसने मेरी ओर हँसकर कहा कि 'शेष फिर कभी' और उठकर चल दिया। मैं उसे रोक नहीं सका।

(२)

पेटोर्निया के लम्बे-चौड़े मैदान से होकर सरकारी डाक जाया करती थी। १०-१२ मील की दूरी पर पड़ाव थे, जिसे पुलिस चौकी भी कह सकते हैं। उन दिनों चौकियों पर ६-६ सिपाही रहा करते थे, उनके पास बन्दूकें थीं। सरकारी डाक के साथ उस दिन पुलिस का सिपाही था, शायद उस दिन किसी जरूरी काम से वह पास की चौकी में जा रहा होगा। अभी पेटोर्निया ४ मील के लगभग दूर होगा कि एक गड्ढे से निकलकर किसी ने उन सरकारी यात्रियों पर आक्रमण किया। आक्रमणकारी ने गोली पैरों में मारी थी, उसका निशाना ठीक बैठा। और सिपाही गिर पड़ा। ठीक इसी समय डाक वाले की आँखों में किसी ने धूल उड़ा दी

और पीछे घूमकर उसकी कमर पकड़ कर गिरा दिया। आक्रमणकारी दो थे, प्रत्येक ने एक-एक को बाँधना आरम्भ किया। हाथ-पैर मजबूती से बाँधकर एक ने अपने पाकेट से एक शीशी निकाली और दोनों को जबरदस्ती सुँघा दी। ५-७ मिनट चुप बैठे रहने के पश्चात् एक ने कहा—मार्नी! इनको आम सड़क पर पड़ा रखना उचित नहीं। मार्नी ने उत्तर दिया—खींचते हुए सड़क से हटा ले चलो।

'खींचने से रास्ते में निशान बन जायँगे।' कहकर उसने सिपाही को पीठ पर लाद लिया और मार्नी ने दूसरे आदमी को। सड़क से हट कर, थोड़ी दूर पर दोनों ने अपना बोझा उतारा और उनकी तलाशी लेने लगे। सिपाही की जेब में एक लिफाफा था और उसपर पेटोर्निया की पुलिस के बड़े अफसर का नाम लिखा था। मार्नी बोला—राबिन्सन, देर करने से कार्य अनिष्ट होगा। राबिन्सन ने भी गरदन हिला दी और पुलिस वाले की वरदी पहिनने लगा। मार्नी ने डाक का थैला फाड़ डाला और उसके अन्दर बीमे तथा हरकार की वर्दी लेकर चल दिया। राबिन्स ने पुकार कर कहा कि सीधे गाँव पर जाना और कार्यों में ऐसे व्यस्त हो जाना जिसमें किसी को सन्देह भी न हो कि तुम कहाँ गये थे और मेरे सम्बंध में कोई जिक्र न करना। मैं भी शाम तक आ जाऊँगा। राबिन्सन सरकारी डाक लेकर पेटोर्निया चला गया, वहाँ चौकी पर ठहरा। नया सिपाही देखकर दूसरे सिपाही उससे प्रश्नोत्तर करने लगे—कहाँ से बदल कर आये, साहब कैसा है आदि-आदि। प्रश्नों के उसने संतोष-जनक उत्तर दिये। कुछ खाया-पीया और लम्बी तानकर सो गया।

× × ×

रात को पेटोर्निया डाक नहीं पहुँची, कोई सूचना भी नहीं आई थी। वहाँ के पोस्टमास्टर ने पुलिस को इसकी इत्तिला दी। थानेदार ने एक हथियारबन्द सिपाही डाक वाले की खोज करने के लिये केसिनवर्ग की ओर भेजा। छद्मवेशी सिपाही राबिंसन को भी केसिनवर्ग ही लौटकर जाना था। अस्तु, दोनों साथ-साथ चले। सबेरा नहीं होने पाया था कि उधर से दो व्यक्ति आते हुए दिखाई दिये। राबिन्सन को अब अपनी भूल याद आई। बेहोश सिपाही और डाक वाला होश में आने पर अपने बन्धन खोल कर चले आ रहे हैं। सामने विकट विपत्ति देखकर भी वह घबड़ाया नहीं। दो-चार कदम पीछे हटकर उसने अपने साथी पर गोली चलाई और जब वह धराशायी हो गया, तब तक दोनों आनेवाले उसके समीप आ चुके थे। राबिन्सन अपने साथी की बन्दूक ले कर भाग खड़ा हुआ। पिछले दिन का घायल सिपाही यद्यपि अधिक चोट लगने के कारण चल-फिर सकता था, किन्तु दौड़ने योग्य न था। और बेचारा हरकारा—उसका तो इस घटना से दम खुश्क हो गया। पिछले दिन की विपत्ति से वह इतना भयभीत था कि रास्ते की दूसरी ओर भाग खड़ा हुआ। राबिन्सन के लिये साफ रास्ता था। दो-तीन घण्टे उपरान्त जब पिछले दिन का घायल सिपाही पेटोर्निया चौकी पहुँचा तो वहाँ वालों को सारी घटना का पता लगा। पुलिसवाले अपने साथी की लाश लेने गये। यह देख कर उन्हें और भी आश्चर्य हुआ कि उसकी लाश का कहीं पता भी नहीं है। साधारण घटना नहीं थी। जार के शासन काल

में किसी सरकारी व्यक्ति पर आक्रमण करना तो दूर किनार, उसकी आलोचना करना भी भयानक अपराध था। घटना-अभिनेताओं की खोज होने लगी। उनके लिये ईनाम की घोषणा की गई।

राबिन्सन उधर छुट्टी पाकर सीधे अपने घर आया। मार्नी उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। बेचारे मार्नी की दशा शोचनीय थी। राबिन्सन ने रात में लौट आने की बात कही थी, किन्तु १२ घन्टे की लम्बी-चौड़ी रात उसने दरवाजे की ओर ताक-ताक कर काटी। सबेरा भी हो गया, राबिन्सन नहीं पहुँचा। वह अपनी अन्तर्पीड़ा किसी से कह भी नहीं सकता था। दोपहर को राबिन्सन के पहुँचने पर उसकी इच्छा तो हुई कि उसके गले लिपट जाय किन्तु एक कार्यकर्ता का जीवन ही विचित्र होता है। देखने वाले न जाने क्यों उससे प्रश्न कर बैठते। पर वह नहीं प्रगट होने देनाच ाहता था कि राबिन्सन उससे अलग—कहीं गया था, किंचित विश्राम मात्र के लिये। किसी ने एक दूसरे से कुछ पूछा नहीं था कि हैक्सले आ गया और उसने दोनों को सम्बोधित करके कहा—'सुना है कुछ तुमने, पेटोर्निया की डाक लूट ली गयी, वहाँ एक पुलिस का आदमी मार डाला गया।' किंचित आश्चर्यभाव प्रकट करते हुये राबिन्सन ने कहा—यह समाचार असत्य है।' एक ही बात में हैक्सले का उत्साह फीका पड़ गया। मार्नी ने परिस्थिति का रुख बदलते हुए कहा, हैक्सले! यदि सत्य भी हो तो भी हमलोगों को ऐसी बातें करने से क्या मतलब? जार-शाही है, यहाँ तिल का ताड़ बनाया जाता है और कहने वाले को फाँसी दे दी जाती है।

हैक्सले ने उत्तर दिया—बात तो तुम्हारी ठीक है, किन्तु यह भी

तो सोचने की बात है कि अत्याचारी को देखकर आँखें बन्द कर लेने से भी तो विपत्ति दूर नहीं होती।

'तो उस विषय की चर्चा करने से ही क्या लाभ उठा सकते हो?' मार्नी ने आवेश से कहा। हैक्सले मार्नी से दबनेवाला व्यक्ति न था। वह बोला—हमारे कहने का अर्थ यह था कि अब जार-शाही के विरुद्ध कार्य आरम्भ हो गया है।

'तुम कैसे कह सकते हो हैक्सले! यह काम निहलिस्टदल का है' मार्नी ने कहा—'संगठित शक्ति के विरुद्ध होना साधारण बात नहीं है।'

"न हो निहलिस्टदल का कार्य, तो भी इससे स्पष्ट है कि भूखे किसानों के धैर्य का समय अब बीत गया और वे पेट के लिये जान-बूझ कर सरकारी रकम को लूट लेने या मर मिटने के लिये तैयार हो गये हैं।"

'और यदि यह धोखा हो?'

'कैसा धोखा?'

'सरकार ने निहलिस्टों और दूसरे नवयुवकों को फंसाने के लिये अपने ही आदमियों द्वारा यह काम करा दिया हो तो क्या यह सम्भव नहीं है?'

'हो सकता है। किन्तु, इसमें तो सिपाही की मृत्यु भी हुई है।'

कुछ क्षण उपरान्त मार्नी ने कहा—यह काम निहलिस्ट दल का नहीं हो सकता?

'क्यों?'

'क्योंकि उधर की ओर शायद निहलिस्ट दल है नहीं।'

किंचित हँसकर हैक्सले ने कहा—निरे बच्चे हो मार्नी ! निहलिस्ट बनने वाले तो हमीं तुम हैं। जिसके अन्तः करण में मातृभूमि के प्रति प्रेम हुआ, जिस किसी ने किसानों के कष्टों का अन्त करने का दृढ़ निश्चय किया, जिसने आत्म-बल का संचय किया, वही निनलिस्ट बन गया।'

'तुम तो मानों निहलिस्ट के प्रचारक हो, ऐसा समझते हो अपने को।' मुस्कराकर मार्नी ने कहा।

'हो सकता है' गम्भीरता से उत्तर मिला।

'किन्तु तुम्हें तो बेहोशी का रोग है।'

भूली हुई स्मृति जाग्रत हो गई। हैक्सले शरमा गया। कुछ क्षण हैक्सले ने उत्तर दिया—'अब मैं बहुत बदल गया हूँ, समय आया तो इसका परिचय दूँगा।' परिस्थिति की गम्भीरता बदल गई। इस वाद-विवाद में रविन्सन ने कुछ भाग नहीं लिया। थोड़ी देर बाद सभी एक-दूसरे से अलग हो गए।

(३)

निश्चय ही हैक्सले की दुनिया बदल गई है। अब वह कायर और डरपोक नहीं रहा। वह इन दिनों कुछ चिन्तित सा रहता है। अपने खेत के पास वाले पेड़ के नीचे बैठा एक दिन वह कुछ सोच रहा था। आधे घण्टे तक वह मूर्तिवत बैठा रहा मानों उसमें प्राण ही नहीं है। फिर कुछ स्पष्ट स्वर में सुनाई दिया, क्रमशः वह स्वर बढ़ने लगा। हैक्सले मन ही मन कह रहा था—राजशाही में गरीबों की दुर्दशा देखकर रोना आता है, उनके पास कपड़े नहीं हैं, खाने को नहीं है, ठठरियाँ शेष रह

गई हैं। फिर भी जार के दूत और चापलूस उनपर अत्याचार करते हैं, बिना मेहनताना दिये काम लेते हैं, उनकी पैदावार छीन लेते हैं, उनकी स्त्रियों की बेइज्जती करते हैं और वह कृषक समाज? हाय कितनी निकम्मी समाज है, वह अपने दुःखों का कारण नहीं जानता। आन्तरिक कारण के बदले बाहरी कारण ढूँढ़ रहा है, वे कष्टों को भूल जाने के लिये उधार लेकर शराब पीते हैं। ज़ार और अमीरों के वेतन-भोगी मुफ्तखोर, धर्म के ठेकेदार बनकर शान्ति का उपदेश देते हैं। राजनैतिक आन्दोलनकारी, भी तो इन्हीं गरीबों को ठगते हैं। आह! कितनी हृदय-विदारक अवस्था है। निरपराधों को जेल भेज दिया जाता है, अपना काम करने के लिये एक के बदले दूसरे को फाँसी पर झुला दिया जाता है। रोने की आज्ञा नहीं है, फरियाद का द्वार बन्द है। आह!...हम क्या करें?...निहलिस्ट ......बन तो सकता हूँ, पर मेरे पास अस्त्र कहाँ?......दल वाले कहां मिलेंगे?...

'क्या पागलपन की बातें बक रहे हो।'

हैक्सले चौंक पड़ा। उसने पास ही राबिन्सन को खड़ा देखा, 'तुम इतने भावुक क्यों हो गये हो हैक्सले?'

'यह भावुकता नहीं है, यह गम्भीर विचार है।' हैक्सले बोला—'संगठित ज़ारशाही के विरुद्ध षड़यन्त्र करना भावुकतामय प्रलाप नहीं तो क्या है?'

'तो क्या चुपचाप अत्याचारों को बढ़ने दिया जाय?'

'अत्याचारों के रोकने के लिये तो खुला आन्दोलन भी हो सकता है और उससे लाभ भी है।'

हैक्सले उत्तेजित हो उठा—खुला आन्दोलन हो सकता है, यह सोचना भावुकतामय प्रलाप है। जिस शासन में बोलने, चलने-फिरने, लिखने-पढ़ने पर बन्दिशें लगी हैं, खुले आन्दोलनकारियों को साइबेरिया की हवा खानी पड़ती है, जहाँ जन-हित के विचार हृदय में रखना भी भयानक अपराध है, वहाँ खुला आन्दोलन !

"तुम जानते नहीं हैक्सले, खुले आन्दोलन से जनता में जीवन पैदा किया जा सकता है, उसमें शक्ति आती है।" राबिन्सन ने गम्भीरता से कहा।

मैं मानता हूँ कि जागृति उत्पन्न करना आवश्यक है, किन्तु इसमें सभी व्यक्ति क्यों लग जायँ। षड़यन्त्र रच कर शासक-समाज को हत्या करने से जनता में बल का संचार होता है। वे शासन की दृढ़ता के स्वप्न से जग जाते हैं।

'हो सकता है, किन्तु पहले खुला अन्दोलन आवश्यक है'

'खुले अन्दोलन में भी अपने कुछ आदमी रहें। वे जनता को जागृत करें और यह हो भी रहा है। शेष षड़यंत्र के कार्य में लग जाँय।'

'आखिर यह नहीं मालूम हुआ कि षड़यंत्र आवश्यक क्यों है ? क्या खुले अन्दोलन से काम न चलेगा।'

'हाँ, न चलेगा काम। जारशाही के तख्ते का खातमा, खुले और शान्तिमय उपायों से नहीं हो सकता, उसके लिये तो षड़यंत्र ही करना पड़ेगा।'

'पता भी तो लगे कैसे ?' क्रोधित स्वर में उत्तर मिला।

'कुछ देशभक्त, सेना और पुलिस में भरती हों, और भीतर ही भीतर सेना और पुलिस को विद्रोही बनाने का प्रयत्न करें। कुछ षड़यंत्र-कारी सरकारी मुहकमों में घुसें, कुछ बाहर रह कर उनको गुप्त प्रचार में सहायता दें। समय आने तक वे आधे से अधिक नौकरों को जार-विरोधी बना लेंगे और ऐसी दशा में उन्हें जारशाही उलटने में बड़ी सहायता मिलेगी, क्योंकि वे सेना के सभी भेद और गुप्त बातें जानते होंगे।'

कुछ क्षण सोचकर राबिन्सन ने कहा—बात तो कुछ समझ में आ सकती है। किन्तु बड़ी कष्टपूर्ण है। इसको भी अभी सोचना है?'

'मैं खूब सोच चुका हूँ' हैक्सले ने कहा।

× + ×

हैक्सले की परीक्षा हो गई। उसके बायें हाथ में गोली मार कर देखा गया कि वह कितना कष्ट सहन कर सकता है। गोली पार हो गई, वह हिला नहीं, आंखों से आँसू नहीं निकले, उसने उ.फ तक न की। वह मानो राबिन्सन का साथी हो गया। कुछ दिनों बाद पेटोनिया की पुलिस की सम्मति के अनुसार तीनों के नाम वारण्ट निकले। कहते हैं, रासनव को आने वाले सरकारी खजाने को इन तीनों ने लूट लिया था और उसके रक्षक पुलिस सिपाहियों को गोली से मारकर उनकी बन्दूकें और बछियाँ छीन लीं। अपराधियों की खोज में आस-पास की पुलिस परेशान है किन्तु उनमें से किसी का पता नहीं चलता। केसिनवर्ग के मिलों में हड़ताल होने की सम्भावना थी, इसलिए पुलिस का पहरा लगा दिया गया था।

मार्नी और राविन्सन वहीं पर पहरा दे रहे थे। निहलिस्ट की विज्ञप्तियाँ वह ले जाता है और उन्हें मजदूरों में बांटता है। खुफिया के एक सिपाही को जो कि मजदूरों में काम करता था पर्चे बांटने की खबर लग गई और वे तीनों पकड़ लिये गये। हवालात में उन्होंने अपना अपराध स्वीकार किया किन्तु नाम व पता गलत बताया। उनसे राविन्सन आदि के सम्बन्ध में पूछा भी गया किन्तु उन्होंने इन्कार कर दिया और अपने व्यवहार से यह प्रकट किया कि वे बिल्कुल बेवकूफ हैं। अलबत्ता, हैक्सले ने पुलिस वालों से बात करने से इन्कार कर दिया। उन दोनों ने पुलिस की पेटियों के नम्बर बदल रक्खे थे। अतः पुलिस वालों को रासनंवर्ग की घटना का स्वप्न में भी ध्यान न आया। वे तीनों जेल भेज दिये गये, हैक्सले उनमें अधिक भयानक समझा गया।

× × ×

केसिनवर्ग जेल की कोठरियों में तीनों अलग-अलग बन्द थे। अभी उनका फैसला नहीं हुआ था। राविन्सन ने सोचा, न जाने जेल में कितने दिन रहना पड़ेगा? उधर सारा बना-बनाया काम बरबाद हो जायगा। दल वालों को बड़ी कठिनता से पा सका था, अब तक तो परिक्षा में दिन बीते। रिवाल्वर चुराया, डाक लूटी, सिपाही मारा, बन्दूक छीनी, खजाने पर हाथ मारा, पुलिस वालों की हत्या करके गोली-बारूद लूटे, तब कहीं दल वालों ने पर्चे बांटने का काम दिया। निहलिस्ट दल की कितनी विकट परीक्षा है............। उनका काम भी तो भयानक है! जरा सा चूका नहीं कि भण्डाफोड़— सत्यानाश! यदि किसी प्रकार बाहर निकल

सकता...! हैक्सले की परीक्षा कुछ पर्याप्त न हुई। कष्ट सहन उतना कठिन नहीं। उसके स्वभाव, सहिष्णुता, गम्भीरता की भी परिक्षा लेनी थी... इस समय तो यह सोचने का समय नहीं है......अच्छा......वार्डर को मिलाया जा सकता है.........दूसरे कैदियों से भी सहायता मिल सकती है। उस दिन मुकदमे की पेशी थी। जेल के फाटक पर तीनों मिले, उनका एक वकील भी पैरवी के लिये आया था, लेकिन मजिस्ट्रेट नहीं आ सका था। तारीख टल गई। चौथे दिन कैदी दिन में हो पिंजड़े से गायब हो गये। जेल की चहार दीवारी पर मोटी रस्सी पड़ी थी।

× × ×

हैक्सले ने आगे कहना आरम्भ किया—अब परिस्थिति बदल गई है, इसलिये यह बातें आज तुमसे प्रगट कर रहा हूँ। वैसे तो यह बातें अपने अपने दल के साथ काम करने वालों के सामने भी प्रगट करना देशद्रोह है और इसका दण्ड है मृत्यु। किन्तु आज राविन्सन बागी नहीं प्रतिष्ठित नागरिक है। उसकी गिरफ्तारी के लिये इनाम नहीं है,बल्कि उसकी आज्ञा ही इनाम का काम करती है। जेल से मैं भाग न सका था। एक बार मेरे हृदय में विचार आया कि यह लोग जान बूझ कर मुझे छोड़ गये हैं—बस, फिर क्या था ? द्वेष पैदा हो चला, मैं भी स्वार्थ-परता पर आरूढ़ हो सकता हूँ......चाहूँ तो सारा भण्डाफोर कर दूँ। ......दूसरे ही क्षण याद आया कि इसमें राविन्सन का क्या बिगड़ेगा ? वह तो निकल ही गया, पकड़ा भी जा सकता था किन्तु, वह तो मरने ही को फिरता है। फिर.........राविन्सन तो देश का कार्य करता है। मैं

यदि दुश्मन हो सकता हूँ तो राविन्सन के स्वार्थ का! देश के स्वार्थ में हानि पहुँचाना तो कायरता है। मैं अपने प्राण बचा सकता हूँ, किन्तु दूसरे को फँसा कर। तो उनके साथी, जिसको मैं फसा दूँगा, उनके घर वाले क्या मुझे जीता छोड़ेंगे? मेरे विचार बदल गये। मुझे सजा हो गई। जेल से लौट आने पर भी मेरे दिल की सफाई नहीं हुई। मैं यही समझता रहा कि राविन्सन जान-बूझ कर मुझे नहीं भगा ले गया था। एक रात को सोते समय मेरा कपड़ा किसी ने उतार दिया, मैंने देखा राविन्सन है। मेरा प्रेम उसके प्रति होने वाले द्वेष को तोड़ कर उमड़ पड़ा। मैंने उसका हाथ पकड़ा और अन्दर ले जाकर पूछा—तुम कहाँ? एक ही बात में उसने उत्तर दिया—'कान्टेन के कमिश्नर को मार कर आ रहा हूँ, मुझे भूख लगी है।" मेरे हृदय की सफाई हो गई। कितना सरल हृदय है राविन्सन का! मैं इसपर स्वार्थपरता का संदेह करता था। वह झिझक कर दूर खड़ा हो गया। मुझसे न रहा गया। मैंने अपने अपराध की क्षमा याचना की। रात ही को राविन्सन चला गया। दूसरे दिन के समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ कि—मोशियो राशिन जो कि कान्टेन के कमिश्नर थे, गत रात्रि को उसकी हत्या हो गई है। उसी समय से उसका नौकर फ्रेजी गायब है, उसी पर हत्या का संदेह हो रहा है। उसके दूसरे दिन अखबारों में दूसरी खबर पढ़ने को मिली कि नगर में एक लाल नोटिस कई जगह चपकी हुई मिली कि, यद्यपि मेरा उद्देश्य राष्ट्र-व्यापी क्रान्ति करना है तथापि रासिन के अत्याचारों का दण्ड देना आवश्यक समझ कर यह कृत्य किया गया। पता लगाने वाले

को ईनाम मिलेगा। नीचे निहलिस्ट-दल के सभापति का नाम था। उस दिन से राबिन्सन मुझे नहीं मिला। मैं असम्बद्ध होने के कारण कार्य से अलग ही रहा। इसके बाद राबिन्सन मुझे उस दिन मिला जिस दिन गाजे-बाजे के साथ वह नगर में आया और वह दिन राष्ट्रीय क्रान्ति का १५ वाँ दिन था।

—:*:—

फाँसी का कैदी

ऊँची नीची पहाड़ियों से घिरे हुए त्रिभुजाकार पेड़ के झुरमुट के बीच वेदयन्ती नदी अपनी सलिल गति से बह रही थी। उसकी गति अवरोध करने के लिये पृथ्वी से सर उठाये हुये पत्थर, उसके सामने पड़े थे। कुछ समय तक नदी के जल ने अपने धीमे शब्दों में, पत्थरों को सामने से हट जाने की प्रार्थना की, स्वयं जल कतरा कर निकल गया। किन्तु अभिमानी पत्थर, पत्थर ही जो ठहरे, टस से मस न हुए। यह दशा देखते-देखते मुझे दोपहर से सन्ध्या होने को आई। मैं लक्ष्य-हीन था, मुझे जाने की चिन्ता तो थी ही नहीं, उसी युद्ध को देख कर अपना समय काट रहा था। मैं कुछ सोचने लगा मुझे नदी के जल के पराजय की चिन्ता थी। मेरे मन में आया कि क्यों न मैं स्वयं ही पत्थर को प्रयत्न करके मार्ग से हटा दूँ और नदी के लिये रास्ता साफ कर दूँ। इतने में एक हिलोर आई। हिलोर थी या पत्थरों का मान-मर्दन करने वाली घटा! सामने के पत्थर तेज वायु में उड़ने वाले पत्तों के सदृश क्षण भर में अदृश्य हो गये। उसकी सहायता के लिये टीले पर के पत्थर कूदे। किंतु वह भी एक गहरी चीख मार कर बेहोश हो गये।

नदी के जल ने उनको न जाने कहाँ ले जाकर डाल दिया। मैं इस अभिमानी पत्थरों की पराजय और वेदवन्ती की शक्तिसम्पन्न धाराओं की प्रशंसा कर, गीत गाने लगा। इतने में किसी ने आकर पीछे से मेरे कन्धे पर हाथ रख कर कहा—'वीरमणि! तुम यहाँ कहा?' मेरा गाना समाप्त हो गया। पीछे मुड़ कर देखा तो वह सरला थी।

× + ×

एक ही दिन देखा-देखी होने पर मैं सरला से प्रेम करने लगा। सरला का सहयोग मुझे प्राप्त हुआ, यह कहानी बहुत लम्बी है। सरला को पाने के पूर्व मैं बड़ा ही निर्भीक था। स्वातन्त्र्य युद्ध के समय फिरंगियों के अत्याचारों की कहानी सुन कर मैं उत्तेजित हो उठता और बदला लेने की धुन में उपाय सोचा करता। अपने गाँव से दूर भीलों की झोपड़ियों में जाकर तीर चलाने का अध्ययन करता और अपने कार्य को आर्थिक चिन्ता से दूर रखने के विचार से उनसे डकैती करने की भी शिक्षा प्राप्त करता, किन्तु सरला के प्रेम ने मुझे बदल दिया। दो-चार दिन साथ रहने के बाद वह प्रेम मेरे लिये बोझ हो गया। एक ओर देश की चिंता, बदला लेने की आग और दूसरी ओर प्रेमाग्नि की लपटें। दोनों अपनी अपनी ओर खींचतीं। इस खींच-तान से मैं पागल हो गया। घर से निकले आज चार दिन हो गये। ये दिन हमने इसी वेदवन्ती के किनारे जंगल में ही काटे थे। आज एकाएक सरला को देख कर मैं कैसा हो गया, कुछ कह नहीं सकता। सरला के प्रश्न को सुनकर मेरे मुँह से निकल आया—'अरे तुम?' मैं आगे न बोल सका। मेरे प्रश्न के उत्तर

में सरला ने कहा—मजनूँ जो सौदाई था, लैला क्या दीवानी न थी ?'
उसने मेरा हाथ पकड़ा और चल पड़ी।

× + ×

सरला ने पूछा—जो मेरा प्रेम तुम्हारे लिये इतना दुखदाई था तो क्यों तुमने इस बला को पाल लिया ? मैंने इसका कुछ उत्तर नहीं दिया। मानों वह किसी दूसरे से कह रही हो। किन्तु वह चुप नहीं हुई। मुझे चुप देख कर वह फिर बोली—'मैं जानती हूँ तुम्हारी खामोशी का कारण। तुम मुझे बन्धन समझते हो। मेरे मुँह से व्याकुलता में निकल गया—'सचमुच।' उसने पुनः कहा—'यह तुम्हारा भ्रम है, मैं महाराष्ट्र जाति की पुत्री हूँ—उसी महाराष्ट्र जाति की, जिसमें प्रातः स्मरणीया लक्ष्मी बाई ने जन्म लिया था। मैं तुम्हारा साथ दूँगी। तुमने मुझे अन्य प्रान्तीय होकर अपना संगी बनाया है, मैं सरला की ओर एक टक ताकने लगा। माइकेल कालेन्स को, आयर्लैंड में दल का प्रभाव जमा लेने पर अथवा टामकाका को पुनः अपनी कुटिया प्राप्त कर लेने पर जो आनन्द हुआ होगा उससे भी अधिक मैं प्रसन्न हुआ। कौतूहलवश मैं पूछ बैठा—'क्या सचमुच ?' सरला बोली—'क्या मैं तुमसे झूठ बोलती हूँ।' प्रसन्नता के आनन्द में न जाने और कितना समय बीता। मुझे होश तब आया जब सरला ने कहा—'वीरमणि ! देखो अंधेरा हो गया है, जंगल में रात व्यतीत करने से कुछ लाभ नहीं। इस शरीर पर अब तुम्हारा अधिकार नहीं है। यह तो देश-माता के भेंट हो चुकी है। यहाँ पास ही एक ग्राम है—वह ग्राम जहाँ महारानी लक्ष्मीबाई के गुरु श्री हरिनारायण

राव जी, ६० वर्ष की वृद्ध माता और ५ वर्ष के छोटे बालक को क्रूर फिरंगी सैनिकों ने फाँसी दी थी। चलो आज की रात्रि वहीं बितायें।'
मैं उठ खड़ा हुआ।

\+ + +

वही इमली का कुल-कलंक वृक्ष आज भी—७२ वर्ष बाद उसी प्रकार छाती फुलाये खड़ा है। उसकी सहायता प्राप्त करने वाले भी उसी प्रकार स्वेच्छा का ताण्डव नृत्य कर रहे हैं। किन्तु वह समय, उस समय की रानी, उस समय के 'विद्रोही' नामधारी सैनिक आज कहाँ हैं? वह नहीं रहे। उस समय की वीरता भी नहीं रही। मैंने एक नवजवान से पूछा—प्यारे! क्या वह समय तुम ला सकते हो? उसने निराशा की हँसी हँसते हुए कहा—'पागल हो गये हो क्या? हमलोगों ने तो शस्त्र आंखों से देखे नहीं, फिर वह समय कैसे ला सकते हैं।' एक वृद्ध से बातें हुईं। उसने कहा—'जानते हो भइया! हमारी गुलामी का कारण? हमने वह दिन अपनी आँखों देखे हैं। मेरी उम्र उन दिनों १०-१२ वर्ष की रही होगी फिर भी मुझे सब बातें मीठे स्वप्न की भाँति याद हैं। उस समय के सिपाही बड़े वीर थे, लेकिन विजय के बाद बिना अपनी शक्ति सुदृढ़ किये ही आमोद-प्रमोद में मस्त हो जाते थे। उनके मुखिया थे, किन्तु उनमें नेतागिरी की बू थी। सेनापति थे, किन्तु शासक नहीं। वे युद्ध कर सकते थे किन्तु स्थापना नहीं।' मैंने बूढ़े से कहा—बाबा! कुछ खुलासा करके कहो। तीन मिनट तक खाँस कर बूढ़ा बोला—जिस समय सैनिकों ने युद्ध आरम्भ किया, उस समय साधारण जनता को कष्ट न होने पाये इसका,

अथवा उसकी रक्षा का, वे प्रबन्ध न कर सके। डाकूओं ने प्रजा को लूटा और फिरंगियों ने इस अवसर से लाभ उठाया। उन्होंने सैनिकों को डाकुओं का साथी घोषित कर, जनता को अपनी ओर आकर्षित कर लिया। भइया! यह भेद है, उस सफलता का। बूढ़ा इससे आगे बातें करने में असमर्थ था, उसकी खाँसी उसे परेशान किये हुए थी। बहुत इच्छा रखते हुये भी मैं आगे न सुन सका।

× × ×

और भी न जाने उस बुन्देलखण्ड के कितने स्थानों को मैंने देखा जिन्हें परदेसियों ने राज्य स्थापना के दिन से आज तक वीरों के घड़ों रक्त से सींचा था। उस पवित्र भूमि पर पैर रखते मुझे संकोच होता। झाँसी कोट पर विजय करने के हेतु जिस पहाड़ी पर अंग्रेजों ने तोपें लगाई थीं, उसे देख कर मेरे हृदय में क्रोध आया कि क्यों न पहिले उसे खोद कर फेंक दूँ। किन्तु मेरे दो साथी थे— एक तो अन्तः करण में डेरा लगाये क्रान्ति-कामना, दूसरा साया की भाँति साथ रहने वाली सरला। दोनों ने एक स्वर से कह दिया—साँप निकल गया, अब लकीर पीटने में क्या धरा है। ऐसे न जाने कितने राष्ट्र-कलंक अब सशरीर जीव धारण करके विचर रहे हैं। यदि जड़ खोदना है तो उनकी जड़ खोदो। मैं कहाँ कहाँ गया, यह कथा विचित्र है। सरला मेरे साथ ही थी। बुन्देलखण्ड की तराई में एक भद्रात्मा को तपस्या करते देख मेरे मन में उनसे ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा हुई मैं उनके पास गया।

× × ×

साधु को मैंने दण्डवत् करके इधर-उधर की दो-चार बातें कीं। अवसर पाकर मैंने प्रश्न किया—महाराज ! आप अकेले स्वर्ग पाने अथवा मोक्ष पाने का प्रयत्न कर रहे हैं, किन्तु आपको क्या यह चिन्ता है कि देश के कितने करोड़ आदमी शारीरिक पराधीनता में फँसे हैं। साधु ने मुस्करा दिया। उस एक सेकेंड की मधुर मुस्कान ने ही व्याख्या सहित मेरे प्रश्न का उत्तर दे दिया। मैंने सरला से पूछा—समझी ? वह मौन थी। मैंने कहा—बाबा जी की मुस्कान का अर्थ है कि संसार माया है। बीच ही में साधु ने टोक कर कहा—भूलते हो बच्चा ! करोड़ों प्राणियों की दासता-बन्धन काटने की तपस्या, सैकड़ों जीवों के मोक्ष से अधिक पुण्यकारी है। मैं वही कर रहा हूँ। यह समय न तो खुल्लम-खुल्ला युद्ध करके जय प्राप्त करने का है और न मौलिक विरोध अथवा करुण-क्रन्दन के चीत्कार करने से ही त्राण पाने का अवसर है। महाराज शिवाजी का विधान भी काम आता दिखाई नहीं देता, क्योंकि उसके लिये भी देश में काफी जागृति चाहिये। मैंने उकता कर पूछा—महाराज ! आप कर क्या रहे हैं ? साधु ने कहा—यह जानना चाहते हो तो आँखें बन्द करो। मैंने आँखें बन्द कीं ? देखा, बुन्देलखण्ड की उसी पहाड़ की तराई में कई आदमी हैं। कोई धन विभाग का इन्चार्ज है तो कोई शास्त्र-विभाग का, कोई परदेश-विभाग का, कोई प्रचार-विभाग का और कोई संगठन-विभाग का। सबके संयोजक एक दूसरे को जानते हैं। किन्तु कार्यकर्ताओं को नहीं। साधू ने कहा—समझे, मैं यही संगठन दृढ़ कर रहा हूँ। अब खोल दो

आखें। आँखें खोलीं तो न तो प्यारी सरला थी और न बाबा जी। न पहाड़, न जङ्गल। जेलखाने का वार्डर फाटक के सीखचों पर डण्डा जमा कर कह रहा था—'जल्दी उठो।'

क्रान्ति कामना

रामसुख का बाप सरकारी सेना में नौकर था। गाँव के लोगों का कहना है कि जिस समय रामसुख फौज में भर्ती होने गया उस समय उसके बाप, चाचा और माँ ने बहुत मना किया। पड़ोसियों ने भी रामसुख को कहा कि ईश्वर की कृपा से तुम्हारे पास रुपया है, जमींदारी है, दस पाँच खुशामदी हैं, तुम्हारा दूसरे की ताबेदारी करना अच्छा नहीं मालूम देता। पर रामसुख ने किसी की बात पर कान नहीं दिया और मेरठ में जाकर सिपाहियों में नाम लिखा ही तो लिया। इधर रामसुख के बाप ने अपनी जमींदारी ठेके पर दे दी। कभी-कभी मानसिक उद्वेग में वह बुड्ढा कह उठता—"जिस लड़के के लिये कम्पनी की नौकरी के जमाने में बेईमानी, ईमानदारी का ध्यान नहीं किया, न जाने किस-किस तरीके से रुपया जमा किया कि लड़का सुख से रहे, वह कुछ न हुआ। उसे पराई ताबेदारी में ही सुख दिखाई पड़ता है।" बात भी यही थी। कम्पनी के साहब का अर्दली होने के कारण जैसुख की बड़ी चलती थी, गुमाश्ते और किरानी महीने में कुछ न कुछ भेंट चढ़ाया ही करते थे। इसके अतिरिक्त वह खुद भी देहात के जुलाहों और पेशावरों से बहुत कुछ कमा लेता था। इस प्रकार जैसुख ने कई गावों की जमींदारी कर ली थी।

× × ×

रामसुख अपने बाप का अकेला था। उसके फौज में भर्ती हो जाने पर बूढ़े जैसुख का मन दुखित हो गया। उसके भाई उसे समझाते; किन्तु जैसुख बहुत छेड़छाड़ करने पर अपना रोना रो देता। इस प्रकार दो-तीन वर्ष गुजरे। अफगानों की दूसरी लड़ाई छिड़ी। जिस सेना में रामसुख नौकर था, उसे मोर्चे पर भेज दिया गया। जैसुख ने जब यह समाचार सुना तो उसका दुख चौगुना हो गया और धीरे-धीरे वह इतना रोगी हो गया कि उसे चारपाई से उठने की भी शक्ति न रही। कुछ दिनों बाद एक सरकारी लिफाफा जैसुख को मिला, जिसमें रामसुख के युद्ध में कम आने की सूचना थी और सरकार ने समवेदना और सहायता के के रूप में १०००) रु० का चेक उसके नाम भेजा था। पुत्र के मरने का समाचार पाकर उस पर वज्र सा गिर पड़ा। किन्तु जब उसने होश सँभाला तो जमींदारी अपनी पतोहू रामसुख की स्त्री के नाम लिखने का विचार किया। शहर से दूर उसका ग्राम था और शायद इसी कारण वह अपने विचार कार्यरूप में न देख सका और इसी बीच में उसकी मृत्यु हो गई।

जिन दिनों कराल काल अपनी यह लीला दिखा रहा था, हरसुख ने उन दिनों पृथ्वी माता के दर्शन न किये थे। इन दुर्घटनाओं के पाँच मास बाद हरसुख का जन्म हुआ। उधर सरकार के यहाँ इस जमींदारी की लावारिस का सवाल उठा। अधिकारियों ने पहिले ही रामसुख को

निःसन्तान लिख भेजा था। बड़ी दौड़-धूप के बाद तै यह हुआ कि जायदाद कोर्ट आफ वार्डस के सुपुर्द कर दी जाय और हरसुख बालिग होने पर उसका मालिक हो। उचित-अनुचित की क्षुद्र परिधि के बाहर रहकर कमाने वाले जैसुख के माल पर अर्ध सरकारी दखल हो गया। महीनों के बाद वर्षों बीतने लगे। किन्तु कोर्ट की ओर से रामसुख के परिवार को एक कौड़ी की भी सहायता नहीं दी गई। जैसुख के मर जाने से एक हजार के चेक को भुनाने में बड़ी खींचा तानी हुई। बालक हरसुख और उसकी माता का गुजर घर के सम्पत्ति पर होने लगा। कुछ दिनों बाद स्थायी रकम ने जवाब दे दिया। अर्थाभाव के कारण उस परिवार के दिन बड़ी मुसीबत में कटते। एक-दो नहीं, दस-बीस बार अधिकारियों से प्रार्थना की गई कि दुखी परिवार को कुछ सहायता कोरट से दिलाई जावे, किन्तु सब बेकार। धन-जन-विहीन विधवा की भी भला कौन सुनता है। बेचारी निराश हो गई।

× × ×

विधवा माता ने किसी तरह, अपने माइकेवालों की मदद से, अपना पेट काट कर हरसुख को पढ़ाने-लिखाने का ध्यान रखा। उसने इन्ट्रेंस की परीक्षा पास की। वह आगे और भी पढ़ना चाहता था और दूसरे लोग भी उसे ऐसा ही सलाह देते थे, किन्तु उसकी आशा के आगे अर्थाभाव का पहाड़ था। इतने ही में उस पर कई सौ का कर्जा हो गया था। उसे तथा उसकी माता को आशा थी कि बालिग होने पर सरकार अपनी उदारता से जमींदारी सौंप देगी और तब वह आनन-फानन में

ऋण भुगतान कर सकेगा। अब हरसुख की आयु २१ वर्ष की हो चुकी थी। उसने सरकार में बालिग होने की दरख्वास्त दी और जमींदारी पर कब्जा दिलाने की भी बात कही। किन्तु अदालत ने उसका यही उत्तर दिया कि वह पहले अपना हक साबित करे, तब उसका दखल हो सकता है। हरसुख यह अच्छी तरह जानता था कि इन दिनों न्याय होता ही नहीं। ही नहीं। न्याय पैसों पर अवलम्बित है। इधर २१ वर्ष तक कोर्ट ने उसे एक कौड़ी तक न दी थी। फिर भी उसने दावा न करना ही निश्चय किया। उसके महाजन ने जब यह देखा तब वह अपने रुपयों के लिये सख्ती करने लगा। फलतः हरसुख पर इन दिनों चारों ओर से विपत्तियों का आक्रमण था। आगे पढ़ न सकने की आत्मग्लानि, रियासत से दस्तबरदार हो जाने का मनो-वैकल्य, महाजन की जूती और पेट का सवाल था।

× × ×

हरसुख चार पैसा पैदा करने के विचार से मेरठ आया। एक-एक करके बहुतेरे दूकानों पर नौकरी के लिये फेरी लगाई, लेकिन वह सफल मनोरथ न हुआ। कई दिन इसी प्रकार भटकने के बाद उसने कानपुर जाने की ठानी। सोचा कि वहाँ पर बहुत सी मिलें हैं, कहीं न कहीं कुछ डौल लग ही जायगा, किन्तु उसके पास खाने तक को पैसे नहीं थे, रेल का किराया कैसे देता। पैदल चल कर पहुँचना उसके लिये असाध्य था। पेट की ज्वाला शरीर को जलाये दे रही थी। निदान वह बिना टिकट रेल पर बैठा। दो स्टेशन भी पार न कर सका था कि रेल के भूतों ने उसकी गर्दन दबाई। भूखे हरसुख ने अपना दुख रोया, खाली पेट दिखाया, किन्तु हृदय और दया तो अब पाप का रूप धारण करके कर्तव्य

के नाम पर रेल कम्पनी के हाथों बिक चुकी थी। गाजियाबाद स्टेशन पर हरसुख पुलिस के हवाले कर दिया गया और मजिस्ट्रेट के हुक्म से किराये के नाम पर बदन के कुरते ने भी उसका साथ छोड़ दिया। अपना ६) रुपये का कम्बल उसने २) रुपये में बेंचा और उसने दिल्ली का रास्ता पकड़ा।

× × ×

सैकड़ों बी० ए० पास, जिस दिल्ली में जूतियाँ चिटकाते घूमते है, वहाँ एन्ट्रेन्स पास को कौन पूछता है। हरसुख को कहीं भी पेट भर भोजन न मिला, लाचार उसने एक होटल वाले के यहाँ २) नकद और खूराकी पर नौकरी कर ली। उसके कर्जदारों ने घर का लोटा-थाली कुर्क करा लिया। उसकी माँ किसी तरह लड़के के भेजे हुए दो रुपयों पर आधे पेट रहकर गुजर करती थी। ६ मास की बात है, वह अपनी माता की बीमारी की खबर सुन कर गाँव आया था, किन्तु घर पहुँचने के पूर्व ही पर्याप्त चिकित्सा और भर पेट भोजन न मिलने से उस बुढ़िया का देहान्त हो गया। हरसुख ने माँ की लाश को काली नदी के किनारे जलाया। उसके चित्त में प्रश्न उठा कि अब गाँव में ही रह कर खेती करे। किन्तु उसका स्वास्थ्य तो पहले ही नष्ट हो चुका था। एक बार उसने आत्म-हत्या करने की भी सोची। काली नदी के ऊँचे करारे से वह कूदना ही चाहता था कि किसी ने उसे पीछे खींच लिया, वह था उसका विवेक। वह कह उठा, तुम्हारी दुर्दशा का कारण यह शरीर नहीं है। वस्तुतः सरकार की कृपा से ही तुमने स्वास्थ्य खोया, धन खोया, माता खोई, दर-दर धक्के खाये। शरीर दण्ड देना अभ्यास है। कुछ क्षण पश्चात् उसके चित्त में क्रान्ति की कामना उत्पन्न हुई और वह उन्मत्त की भाँति तेजी से दिल्ली की ओर चल दिया।

—:*:—

गुरु दक्षिणा

अवध की नवाबी के दिन बीत चुके थे। उसका सूर्यास्त हो रहा था। इधर पश्चिम वाले पूर्वीय भारत में अपना काफी सिक्का जमा चुके थे मुर्शिदाबाद में अप्रत्यक्ष रूप में तथा बंगाल, मद्रास, मध्य प्रदेश आदि प्रदेशों में जहाँ तहाँ अंग्रेजी झंडा फहरा चुका था। बड़े लाट उपाधि-धारी अंग्रेज, उस राज्य का संचालन करते ठे। सहसा एक दिन अंग्रेजों के एक दूत ने आकर, नवाब के भरे दरबार में उपस्थित हो कर एक पत्र दिया। पत्र था या काल का संदेश ! नवाब वाजिदअली शाह ने पत्र पढ़ा, पैरों के नीचे से धरती खिसक गई। मुँह का पान कुम्हला गया, होश बेहोश हो गये। सारा दरबार सन्न था। किसी के मुँख से शब्द नहीं निकलता था। पत्रांकित टेढ़ी लकीरों ने साक्षात तक्षक का रूप धारण करके डँस लिया था। सारी सभा मौन थी। इस घटना के थोड़े ही दिन बाद, अंग्रेजी सेना के कई अफसरों ने सामने एक परवाना रखा और बिना किसी उत्तर की प्रतीक्षा किये उनको कलकत्ते पहुँचा दिया।

× × ×

बुरका सम्भालते हुये मेहरुन्निसा ने कहा—मर्द आदमी, टुक सबर कर। महलसरा में जाने की ऐसी क्या उजलत है ! यह शाही जनानखाना

है, इसमें दखल करना बेजा है। कड़क कर राबिन्स ने अपने सहकारी स्मिथ से अंग्रेजी में कहा—कायर मत बनो, तुम इसके कहने पर सरकारी काम में देर करते हो ? कन्धे के धक्के से स्मिथ ने मेहरुन्निसा को हटा दिया और अन्दर मकान में घुसने लगा। मेहरुन्निसा ने पुनः दरवाजा रोक कर आर्त्त स्वर में विनय की। कहा—टुक रहम खाओ। मालिके-मुल्क खुदा के लिये, मुहताजों के लिये गज भर जमीन तो बख्श दो।

'चुप रहो हरामजादियों ! इस महल पर सरकारी कब्जा है। तुम लोग इसमें अब नहीं रहने सकता।'

'शाही हरम में मदाखलत करना अखलाकी जुर्म है। ऐसे संगदिल न बनिये। सरकार मैं आप के कदम चूमती हूँ।'

'सरकारी इन्तजाम में खलल करेगा तो बेंत मारा जायगा। हट-जाव, अब बादशाह का इस मकान में कोई हक नहीं। तुम, तुम्हारे मकान तुम्हारे पास के जेवर सभी सरकारी मिल्कियत है।'

'मैं क्या सुन रही हूँ, पाकपरवर दीगार ! मेरे नवाब की सभी बेगमों को—सारा माल असबाब आज गैर मुल्की किरानियों का हो गया। इन लोगों के बैठने के लिये चप्पा भर जमीं भी नहीं।'

× × ×

'मैंने माना कि लखनऊ पर अंग्रेजी झंडा लहरा गया। लेकिन क्या इसके यह भी माने हैं कि लखनऊ में इन्सानियत भी छुट्टी ले गई।' विश्वेश्वर ने अपने साथी की बातों का उत्तर देते हुये प्रश्न किया। रामसिंह ने सोचकर कहा—'तुम्हारा यह कहना ठीक है कि इन्सानियत के

खयाल से बेगमों को धक्के देकर महल से नहीं निकालना चाहिये था। लेकिन यह कहे कौन ? खुद नवाब ने यह सब सुन कर क्या कहा था, जानते हो ?'

हाँ-हाँ जानता हूँ। उन्होंने ठण्ढी सांस भरकर कहा था—

'बुलबुल ने आशियाना चमन से उठा दिया।

'उसकी बला से बूम बसे या हुमा रहे।'

'नजरबन्दी की कैद से मजबूर और दुश्मनों की संगीनों से लाचार नवाब, गरीब नवाब और कर ही क्या सकता था ?'

'अच्छा, खैर इन बातों से नतीजा ?'

'इन बातों से नतीजा ! सुनोगे इस विषय के छेड़ने का मतलब ?'

विश्वेश्वर कुछ देर चुप रहा। रामसिंह उसके मुँह की ओर एकाग्र कष्ट से ताकता रहा। ठण्ढी सांस भर कर विश्वेसर ने कहा—'जब नवाब की बेगमों के साथ इन फिरंगियों को ऐसे हरकात अमल में लाने में पेसोपेश नहीं हुआ तो मामूली औरतों के साथ वह न जाने क्या से क्या कर सकते हैं......।'

दूर से आते हुए एक मुसलमान ने बात काटते हुए कहा—'बंगाल वाक़यात उनकी स्याहदिली के सबूत हैं।' वह मुसलमान भी वहीं आकर खड़ा हो गया। बिश्वेश्वर ने फिर कहना आरम्भ किया–दोस्तो ! 'क्या करूँ ? मैं तो बूढ़ा हो गया, नहीं तो अपने मुल्क से इन लोगों को निकाल बाहर करने के लिये तलवार का सहारा लेता !'

इसी समय पर कुछ दूर पर धूल उड़ती हुई दिखाई दी और बात की बात में कुछ अंग्रेजों ने आकर इन तीनों को बाँध लिया।

× + ×

ब्रह्मावर्त के समीप जंगल में गंगातट पर महावीर जी का मन्दिर था। उसमें शिवचरण गिर नाम के वृद्ध संन्यासी आज डेढ़ दो साल से आकर रहने लगे हैं। उनके योगाभ्यास की चर्चा चारों ओर हो रही है। रोज दस-बीस आदमी उनके दर्शन के लिये उस बन में आया ही करते हैं। महाराष्ट्र नरेश बाजीराव जी पेशवा के दत्तक पुत्र, धुन्धूपन्त नाना साहब का निवास वहाँ से ६ मील पूर्व की ओर था। अपना राज्य अथवा पेन्शन फिरंगियों से मिलने के उनके सारे प्रयत्न व्यर्थ हो चुके थे। एक दिन नाना साहब भी महात्मा जी के दर्शन के लिए गये। उदासीन होकर धुन्धूपन्त ने बाबा जी से अपना शिष्य बना लेने का अनुरोध किया। नाना साहब ने कहा—'महाराज ! मैं तो जीवन-संग्राम में पराजित हो चुका हूँ और अब तक हमारी सभी आशायें और चेष्टायें व्यर्थ हो गई हैं। बाबा ने ढाढ़स देते हुए उत्तर दिया—'राजन् ! जितने बड़े कार्य का तुमने बीड़ा उठाया था, जितनी महान् तुम्हारी आशा थी, तुमने उसका उपयुक्त मूल्य नहीं दिया।'

'अर्थात् ?'

अर्थात् यह कि राज्य का मूल्य धन नहीं है। मानसिक महात्वाकांक्षा भी नहीं है और फिर भी एक अन्यायी के सम्मुख।'

'तो फिर ?'

'उसका मूल्य है बलिदान—पवित्र और वीरत्वपूर्ण बलिदान !' नाना और उनके साथी ताँत्या तथा सदाशिव के मस्तक महात्मा के चरणों पर नत हो गये। उनका मोह भंग हो गया।

× + ÷

महावीर के मन्दिर पर, जहाँ सदाशिव नित्य प्रातः संस्कृत का अध्ययन करने जाता है वहाँ आस-पास के गाँवों के और भी कई ब्राह्मण-बालक व्याकरण पढ़ने जाया करते हैं। महात्मा जी के नित्य नैमित्तिक व्यवहार और त्याग का उन बालकों पर काफी प्रभाव पड़ा है। संस्कृत में दक्ष होने के कारण इधर-उधर के निवासियों को महात्मा जी पर और भी अधिक श्रद्धा बढ़ गई है। एक साल इसी भांति और बीता। ज्येष्ठ का दशहरा था। ब्रह्मावर्त के पुण्य तीर्थ पर लाखों की भीड़ लग रही थी। महात्मा शिवचरण गिरि भी अपने शिष्यों सहित ब्रह्ममुहूर्त में स्नान करने गये। स्नानादि से निवृत्त हो शिष्यगण ज्यों ही अपना अध्ययन करने बैठे महात्माजी ने सबों को सम्बोधित करके कहा—

"पुत्रों हमारी शिक्षा पर्याप्त हो चुकी है। इधर हम भी समाधि लेना चाहते हैं। आज ही इसका मुहूर्त्त है।" महात्माजी के समाधिस्थ होने की बात सुन सभी शिष्य मर्माहत हो गये। सदाशिव ने हाथ जोड़ करके प्रार्थना की—'महराज! आपकी यह इच्छा आज से पूर्व कभी नहीं प्रकट हुई थी। अब कृपाकर हम सबों को इतना अवकाश तो अवश्य दीजिये जिससे आपकी गुरुदक्षिणा देकर ऋण-मुक्त हो सकें।'

"मनुष्य को, कार्य पूर्ण होने के पूर्व अपनी इच्छा न प्रकट करनी चाहिये। रही गुरु दक्षिणा, सन्ध्या तक समय काफी है।"

× × ×

तीसरे पहर मन्दिर में बड़ी भीड़ थी। अपने हितेच्छु तपस्वी शिवचरण गिरि की समाधि ग्रहण की बात सुनकर नर-नारी उस जंगल में पिल पड़े थे। शिष्यगण अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार सोने, चाँदी

आदि बहुमूल्य आभूषणों और वस्त्रों को गुरु दक्षिणा में भेंट करने के लिये जुटे थे। सदाशिव भी मोतियों से चमकते हुए वस्त्रों को गुरु दक्षिणा में भेंट करने के लिये जुटे थे। सदाशिव भी मोतियों से चमकते हुए वस्त्रों को धारणकर आ चुका था। किन्तु हरिदास नाम का एक शिष्य अनमना इधर-उधर घूम रहा था। उसके भाव और विकार से उसका चेहरा खिल उठता और कभी मुर्झा जाता। महात्मा शिवचरण गिरि एक कुशासन पर बैठे मुस्करा रहे थे। सबों ने पारी पारी से अपनी गुरुदक्षिणा भेंट की। सदाशिव और हरिदास अभी तक चुप थे। महात्मा ने मुस्कुरा कर कहा—सदाशिव ! तुम्हारी गुरु दक्षिणा ?"

महाराज ! गुरुदेव ! मैंने खूब ढूँढ़ा। इस खड्ग से बढ़कर मुझे कोई वस्तु भेंट के योग्य न मिली।

'तुम क्या देते हो हरिदास ?' महात्मा ने प्रश्न किया। हरिदास के आखों से आँसू निकल रहे थे। न जाने शोकावेग से अथवा हर्षावेग से गद्गद् हो उसने खड़े होकर विनय पूर्वक कहा—'महाराज ! इस कंगाल के पास इस शरीर के अतिरिक्त और क्या है ? यह गुरुदक्षिणा में समर्पित है।

दौड़कर महत्मा ने हरिदास को उठा लिया और आसन पर लाकर सदाशिव को बुला कर सब लोगों से कहा—वस्तुतः इन्हीं दोनों ने हमें गुरु दक्षिणा दे सन्तुष्ट किया है। आज से तोन चार वर्ष पूर्व फिरंगियों के अन्याय से पीड़ित हो हमने सोचा कि इस बुढ़ापे में क्या कर सकता हूँ। उस दिन क्या जानता था कि मैं यह कर सकूँगा। बेटा हरिदास ! तुम भारत के हर एक भाग में फिरंगियों की कुटिल नीति का भंडाफोड़ कर दो। आओ हमारा आशिर्वाद है, अपने कर्तव्य पर दृढ़ रहो।

—:*:—

विजयोत्सव

ऊँचे परकोटा वाले मकान के दूसरी मंजिल के एक सुसज्जित कमरे में दूध फेन सी एक चारपाई बिछी थी। उसमें इधर-उधर दीवारों पर नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्र टगे हुये थे। युद्ध-सम्बन्धी तस्वीरें दीवालों पर टँगी थीं। रात्रि के लगभग दस बज चुकें थे। किन्तु वह कमरा जनशून्य था। धीमे धीमे जलती हुई एक कण्डील किसी के आने की पल-पल पर बाट जोह रही थी। कमरे के बाहर एक दरवान एक लम्बी अचकन पहिने मुण्डासा बाँधे नंगी तलवार लिये टहल रहा था। नाद में पड़ी हुई कटोरी डूब गई। द्वारपाल ने दस की घण्टी बजाई। द्वारपाल का मुख चिन्तित सा दिखाई देने लगा। रह रह कर वह ठहर जाता और किसी के आने की आहट लेने लगता। इसी प्रकार लगभग एक घण्टा और बीता। अब तो वह उत्तेजित सा हो उठा। उसी समय किसी के आने की आहट सुनाई दी। द्वारपाल के पैर रुक गये। आगन्तुक एक सुदृढ़ शरीर वाला नवयुवक था। उसकी आयु मुश्किल से २५-२६ वर्ष होगी, उसके शरीर पर हथियार और विभिन्न हर्बे कसे हुए थे। हाथ में नागदौन की माला थी। द्वारपाल ने पीछे हटकर प्रणाम किया। आगन्तुक ने आँखें फेरी और बोला–काका, कोई नई बात तो नहीं है? द्वारपाल ने उत्तर दिया—कुँवर

भी कोई नई बात तो नहीं, लेकिन इतनी देर तक आप के बाहर रहने से चित्त चंचल हो उठा था। नवयुवक बिना रुके—आज सचमुच कुछ देर हो गई है—कहते हुए भीतर चला गया। नवयुवक ने अस्त्र-शस्त्र खोले, यथास्थान टाँगा और सुस्ताने के लिये चार पाई पर बैठ गया।

नवयुवक अभी अच्छी तरह सुस्ता भी नहीं पाया था कि एक दूसरे वृद्ध पुरुष को साथ लिये, एक दूसरे नवयुवक ने उसी कमरे में प्रवेश किया। इस नवागन्तुक सज्जनों में वृद्ध का वेश साधुओं जैसा था और और दूसरे नवयुवक राज कुमार जैसे दिखाई देते थे। इन दोनों के प्रवेश करते ही पहिला नवयुवक चारपाई से उठ खड़ा हुआ और उसने वृद्ध साधु को प्रणाम किया। वृद्ध ने आशिर्वाद देते हुए कहा—'पुत्र! छत्र साल विजयी हो।' नवागन्तुक राजकुमार ने छत्रसाल के चरण छुये। प्यार-पूर्वक छत्रसाल ने उसको पीठ पर हाथ फेर पूछा—'आज दिन भर कहाँ रहे विजय?' 'कुछ शिकार में देर हो गयी।' कह कर विजय वृद्ध साधु के सामने खड़ा हो गया। सामने पड़ी हुई चौकी पर साधु जी बैठ गये और दोनों को बैठने का आदेश दिया। साधु ने प्रश्न किया—'छत्रसाल! तुम कुछ चिन्तित से दीखते हो। हमें जान पड़ता है कि तुम्हारा शरीर अच्छा नहीं है।'

'तो कोई चिन्ता होगी जो शरीर गलाये दे रही है।'

विजय हाथ जोड़ कर बोला—'महाराज! परतन्त्रता के जीवन में सुख किसे हो सकता है? आत्माभिमानशून्य नर-कंकालों को ही परदेशी शासकों के होते हुये सुख-चैन मिल सकता है।'

'यह तो ठीक है बेटा विजय!' गुरु जी ने उत्तर दिया—'किन्तु

स्वाधीन होना तो हम लोगों के जीवन का व्रत है। जन्म भर चिन्तित रह कर अपना व्रत कैसे निभा सकते हो।'

इसी समय एक दासी ने आकर निवेदन किया कि 'कुँवर जी! भोजन बड़ी देर से तैयार है, छत्रसाल ने उत्तर दिया—'भोजन से अधिक मूल्य के कार्य में लगा हूँ।' साधु महाराज के आदेश देने पर छत्रसाल वहाँ से उठ बाहर चले गये।

× + ×

भोजनोपरान्त छत्रसाल पुनः महाराज के पास आये। फिर वही बात छिड़ गई। छत्रसाल ने कहा—'महाराज! जो कार्य हमें करना है उनकी चिन्ता न रखने से कैसे काम चल सकता है।'

'बेटा! चिन्ता और स्मरण में अन्तर है। व्रत का स्मरण रखना चाहिये। चिंता तो एक घातक वस्तु है।'

'हाँ महाराज! मैं व्रत को तो स्मरण ही रखता हूँ, किन्तु इन दिनों चिन्तित होने का एक प्रबल और विशेष कारण है।'

'महाराज! विजयादशमी के दिन समीप हैं, इसी कि चिन्ता है।'

वृद्ध मुस्कराये और बोले—'तेरी चिन्ता सफल हो।' विजय का कौतुहल बढ़ गया। वह कभी छत्रसाल की ओर कभी वृद्ध साधु की ओर ताकता। अन्त में वह अपनी जिज्ञासा का संवरण न कर सका। उसने पूछा —'विजया दशमी की कैसी चिंता कुँवर जी!' छत्रसाल ने उत्तर दिया 'भाई विजय! कैसे अनजाने से पूछते हो कि विजय की कैसी चिन्ता!' इस बार विजय और भी आश्चर्यचकित हो गया और सकरुण नेत्रों से छत्रसाल की ओर देखने लगा। छत्रसाल ने पुनः कहना आरम्भ किया—

'नहीं याद आया तो सुनो। भगवान राम ने विजयादशमी के दिन विजय पाई थी, उसी की उस दिन स्मृत मनाई जाती है। किन्तु जानते हो भैया सच्चे क्षत्री स्मृति मनाते नहीं, स्मृति छोड़ जाते हैं। अब समझे?' छत्रसाल की बात पूरी होते न होते विजय उछल पड़ा।

'कुँवर जी इस साल परदेशी शासकों के पंजे से भारत भूमि को स्वतंत्र करके विजय-स्मृति की लाज रखेंगे।'

द्वारपाल ने बाहर की घण्टी बजाई और साधु महाराज की आज्ञानुसार शेष दोनों युवक सोने के लिये चले गये। वृद्ध महाशय ने भी वहीं आसन जमाया।

एक बड़े से सुन्दर चौपाल में पचासो चौकियाँ पड़ी थीं। बीच में एक ऊँचा सिंहासन बिछा था। हरे मखमल की चादर बिछी हुई थी। उस दिन प्रातः से ही लोग वहाँ आने लगे थे। सात बजते बजते सारी चौकियाँ भर गईं। सन्तरी दरवाजे पर पहरे दे रहे थे। इतने में 'महाराज छत्रसाल की जय!' का घोष सुनाई दिया। दरबारी आसन छोड़कर खड़े हो गये। वहीं दोनों कल वाले नवजवान वृद्ध साधु को साथ लिये आये। सभों ने अभिवादन किया। एक बार पुनः जय घोष हुआ। फिर सन्नाटा छा गया। छत्रसाल, विजय और साधू बाबा भी यथा स्थान जा विराजे। सभा में सन्नाटा हो जाने पर वृद्ध महाशय खड़े हुये और उन्होंने कहा—'दरबारी गण! आपके कुँवर छत्रसाल ने निश्चय किया है कि इस वर्ष विजयादशमी की स्मृति मनाने के स्थान पर विजय-उत्सव ही मनाया जावे आप महानुभावों का इस विषय में क्या मत है?' सभी ने एक स्वर से उत्तर दिया—'अति उत्तम। अवश्य ऐसा ही हो। सभा में दूसरा प्रश्न

उठा। विजय ने कहा—'हमारे मत में यह बात आती है कि चरखारी पर धावा बोला जावे। कुछ लोगों ने रामसागर की बात उठाई। लेकिन अन्त में चरखारी पर ही आक्रमण करने की तै हुई। एक हरकारा के द्वारा चरखारी के सूबेदार सरफराज अली के नाम चिट्ठी भेजी गई कि वह अपनी राजी से किले की चाभी छत्रसाल को सौंप दें अथवा युद्ध के लिये तैयार हो। सरफराज अली ने उस चिट्ठी के उत्तर में कहला भेजा कि काफिरों पर हुकूमत करने के लिये ही हम सभों को खुदा ने पैदा किया है। आखिरश चढ़ाई करना निश्चय हो गया।

× × ×

'प्रियतम्! इस बरसते हुये मेह में भयंकर अँधियारी में मुझे अकेली छोड़ आप किधर जा रहे हैं? प्राणनाथ! स्त्री की रक्षा करना भी तो कर्तव्य है?'

छत्रसाल ने उत्तर दिया—'प्यारी! क्षत्राणियों की रक्षा के लिये किसी पुरुष की आश्यकता होती है? यह बात मुझे आज ही मालूम हुई, बोलो क्या यह सच है?'

'सच नहीं झूठ' कमला बोली—'प्रियतम्! बिल्कुलही मिथ्या। क्षत्राणी तो अपनी रक्षा स्वयं कर लेती है।'

'फिर मेरे रोकने का कारण?'

'कारण, बताऊँ कारण? शत्रु के टिड्डी दल में, आपका दो हजार सैनिकों के बल पर जाना मुझे भयभीत करता है।'

'भयभीत करता है प्राणेश्वरी! किसको? तुमको! क्षत्राणी को! अरि-केहरि छत्रसाल की धर्म पत्नि को! ओफ!'

'प्रियतम ! बरसात से बढ़े हुये मार्ग के नद-नाले, आप कैसे पार कर सकेंगे ? केवल इतनी ही चिन्ता है।'

इसकी चिन्ता मत करो हृदयेश्वरी !'—

जो हिचक के रह गया, सो रह गया इधर।

जिसने लगाई ऐंड़ वह खन्दकों के पार था॥

'मैं भी चलूँगी नाथ ! युद्ध क्षेत्र में।'

'तुम कोमलांगिनी रणक्षेत्र में जाकर क्या करोगी ?'

'प्राणनाथ ! क्या करूँगी ? क्षत्राणी क्या कर सकती है ? वही मैं भी करूँगी।'

'तुम स्त्री होकर युद्ध-भूमि में क्या कर सकती हो।'

'मैं अपनी, अपने प्राणनाथ की रक्षा कर सकती हूँ।'

'तो क्या छत्रसाल इतना कायर और कमजोर हो गया जो स्त्रियों की की रक्षा से अपना प्राण बचायेगा ! छत्रसाल अपने जीते जी इतना पतित नहीं हो सकता।'

'स्वामी ! यह बात नहीं है। मैं शत्रु-मुण्ड की माला विजयोत्सव पर देवी की भेंट करने की प्रतिज्ञा कर चुकी हूँ। उसके पालन के निमित्त मैं युद्धक्षेत्र में जाकर स्वयं ही शत्रु का शिरच्छेदन करूँगी।'

'मैं ला दूँगा तुम्हारे लिये शत्रु-मुण्ड !'

'विजयोत्सव के पहिले ?'

'हाँ विजयोत्सव के पहिले ही।'

'प्रतिज्ञा करो।'

वीर भूमि भारत के आत्माभिमानी क्षत्री वीर, परतन्त्र होने पर भी शत्रुओं के सामने नत मस्तक नहीं होते। आकाश में चमकने वाले नक्षत्रों! मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि विजयोत्सव के पूर्व ही शत्रु-मुण्ड ला दूँगा।

कमला ने आँचल छोड़ दिया। दही से तिलक किया। छत्रसाल ने रास्ता लिया।

× × ×

चरखारी पर डेरा डाले सात दिन हो गये, लेकिन अब तक छत्रसाल को सफलता के चिन्ह नहीं दिखाई दिये। मुगलों की अपरमित सेना के सामने छत्रसाल के दो हजार सिपाही नगण्य थे। विजया दशमी के केवल ११ दिन शेष रह गये थे। छत्रसाल को चरखारी विजय की चिन्ता व्याकुल कर रही थी। अन्त में रात के समय एक सभा की गई और बीड़ा रखा गया। जो कोई बीड़ा उठावे वही दूसरे दिन के युद्ध में विजय प्राप्त करे। घड़ी भर तक बीड़े की ओर किसी ने ताका भी नहीं। विजय भी इस युद्ध के साथ था। उसने बीड़ा उठा लिया और विजय की प्रतिज्ञा की। दूसरे दिन घनघोर युद्ध हुआ। मुगलों की सेना बहादुर बुन्देलों के सामने काई सी फट गई। तीन घण्टे की लगातार युद्ध और तलवारों की मार ने किले का रास्ता साफ कर दिया। सरफराज ने अपने घोड़े को छत्रसाल के मुकाब्ले किया। इतने ही में उस बाँके बुन्देले का भाला उसके भाल के पार हो गया। चरखारी पर विजय हो गई। जिस दिन विजयोत्सव में देवी की पूजा थी उसी दिन सेना राजधानी में पहुँची। छत्रसाल अपने रनिवास

में गये। द्वार पर खड़ी रानी ने आँचल पसार कर कहा—'प्राणनाथ! लाइये हमारा उपहार! विजय का प्रसाद!' छत्रसाल ने सरफराज का सर आँचल में डाल दिया। कमला ने देवी की पूजा की। देवस्थान से किंचित दूर कोई वृद्ध गा रहा था—

लोग कहते हैं बदलता है जमाना अकसर।
मर्द वे हैं जो जमाने को बदल देते हैं॥

—:*:—

तरुण तापसी

बङ्गाल के नदिया जिले में पुरुषपुर नामक एक ग्राम है। वहाँ कुछ समय पहिले घोषवंश वाले बड़े प्रतिष्ठित नागरिक थे। जिन दिनों की यह बात है उन दिनों वहाँ सुबोध घोष नाम के एक व्यक्ति रहते थे। वह ईस्ट इण्डिया कम्पनी में किरानी का काम करते थे। कम्पनी को उन दिनों नवाब के हाथों से दीवानी के अधिकार प्राप्त हो चुके थे और कम्पनी के आज्ञानुसार एक घोषणा यह भी निकल चुकी थी कि देश में कपड़े का व्यापार करने वाले तथा जुलाहे अपना सारा कपड़ा कम्पनी के हाथों बेंचें। जो कोई इसकी अवज्ञा करेगा उसे दण्ड दिया जायेगा। इस हुक्म से सारा बंगाल प्रान्त परेशान हो गया था, गाँव-गाँव में खलबली मच गई थी। कम्पनी के नौकर इस आज्ञा की ओट में मनमानी रिश्वत मालोमाल हो रहे थे। सुबोध घोष ने भी इस अन्धेर की कमाई में काफी से ज्यादा धन पैदा कर लिया था। साल में दो मास के लिये दरोगा साहब अपने घर जाते थे। इस साल जिन दिनों घर आये, वे गर्मी के दिन थे। शाही बारातों की धूमधाम थी। दरोगा जी के एक आठ साल की लड़की थी और दस वर्ष का लड़का था। घोष महाशय की स्त्री बड़ी धर्मभीरु थी। उन्होंने अपने स्वामी से कन्या का पाणिग्रहण इसी साल कर

देने के लिये विवश किया। कहा, नवीं वर्ष में या उसके बाद कन्या का व्याह करने में पाप लगता है। सारांश यह कि उसका व्याह गाँव से दस कोश की दूरी पर एक धनाढ्य के यहाँ हो गया। व्याह के बाद छुट्टी खतम हो गई और दरोगा जो अपने काम पर मुर्शिदाबाद लौट गये।

÷ × ⁞

इस बार दारोगा जी सुशील को भी अपने साथ लेते गये थे। वह कहा करते कि मुर्शिदाबाद में थोड़ी बहुत अंग्रेजी सिखाकर लड़के को कम्पनी में ही किसी काम पर लगा देंगे।। न होगा तो, नये हुक्म के मुताबिक जो जगहें बढ़ेगी उसी में भर्ती करवा देंगें। बात यह थी कि कम्पनी की ओर से मनमाने मूल्य पर कपड़े खरीदे जाने के कारण, जुलाहे अपना काम छोड़ रहे थे और इससे कम्पनी को घाटा हो रहा था। इस घाटा को रोकने के लिये एक कानून ऐसा बनने वाला था कि, कोई व्यक्ति जो कपड़ा बुन सकता है अपना कार्य नहीं छोड़ सकता। कानून का मसविदा कौंसिल में पेश था और आज कल में उसपर निर्णय होने वाला था। सुशील इन बातों को कुछ नहीं समझता था। अपने मुहल्ले के लड़कों के साथ खेला करता। बाल-मण्डली से उसकी इतनी घनिष्टता वढ़ गई थीं कि वह दिन में मुश्किल से दो-तीन घण्टे, वह भी तब, जब उसके पिता घर में रहते थे—घर में बैठता था, बाकी वक्त वह मण्डली वालों के घर पर ही बिताता। उसके पड़ोस में एक जुलाहे का घर था। शनिवार के दिन जुलाहे के यहाँ माँ काली की पूजा थी। राखाल जुलाहे ने अपने वंशजों को उसमें आमन्त्रित किया। उधर सुशील भी अपने बाल-मित्र के

अनुरोध से सम्मिलित हुआ था। पूजन हो जाने के बाद राखाल ने आमंत्रित बन्धुओं से नये क़ानून के मसविदे की भी चर्चा की और सम्मति चाही। बूढ़े अनिल ने कम्पनी को रिश्वत देकर क़ानून मंसूख करने की सलाह दी। सुरेश ने कहा—जो आगे होगा देखा जायगा। विश्वास ने नवाब पर हमला करने की बात कही। फणीन्द ने क़ानून तोड़ने की सलाह दी। इसी समय एक ने माँ काली की ओर संकेत करते हुए कहा कि माँ के रूप से शिक्षा क्यों नहीं लेते। बालक सुशील ने भी काली के रण-वेश को देखा और सहम गया।

× × ×

इस घटना को बीते ४ वर्ष हो गये। किन्तु सुशील अब राखाल के घर नहीं जाता। पिता के क्रूर कर्मों से उसका हृदय इतना कायर हो गया था कि वह माँ काली के स्मरण मात्र से काँप उठता है। अब सुशील काफी बड़ा हो गया था और उसके पिता ने उसे अंग्रेजी का भी ज्ञान, काम चलाने योग्य करा दिया था। अनिवार्य कारगोरी क़ानून भी पास हो चुका था और उसी विभाग में उसे नौकरी भी मिल गई थी। यद्यपि सुशील का हृदय कायर था; किन्तु कुटिल नहीं। दो-तीन मास काम करने के बाद उसके हृदय में कम्पनी के कार्य से असन्तोष उत्पन्न हुआ। वह अपने मन में सोचता कि क्या इसी को व्यापार कहते हैं और यदि यह व्यापार है तो लूट किसका नाम है? क्या जबरदस्ती सौदा खरीदना व्यापार है? उसे इस व्यापार में योग देना असम्भव हो गया। वह अपने विचार पिता से प्रकट करना चाहता, किन्तु चिर-संचित कायरता उसे रोक देती।

एक दिन उसके हृदय में भय पैदा हुआ कि कहीं जुलाहों ने सचमुच काली प्रतिमा से शिक्षा तो तब सर्वनाश निश्चित। वह उद्विग्न हो गया और सोच लियाकि आज ही जाकर नौकरी से त्याग-पत्र दे देगा। दफ्तर गया, देखा कि आज माल लाने वाले जुलाहों का विकट रंग है। कोई दो घण्टे भी नहीं हुए होंगे कि दफ्तर के कर्मचारियों में, फिरंगी एजेण्टों में, भगदड़ मच गई। सुशील भी भाग कर घर आया। शाम को मालूम हुआ कि मूल्य पर झगड़ा होने के कारण जुलाहों ने एजेण्ट और गुमाश्ता सुबोध को बाँसों की मार से यमलोक भेज दिया। वह सन्न हो गया।

+ + +

सुशील अपने घर आया तो कभी अपने पिता की हृदयहीनता, कभी नवाब की बेवकूफी, कभी फिरंगी व्यापारियों की बदमाशी की मन ही मन आलोचना करने लगे। उसने निश्चय किया कि पिता के कार्यों का प्रायश्चित और व्यापारियों की लूट को दूर करने का भरसक प्रयत्न करूँगा। इन्हीं दिनों उसे अपनी बहन की मृत्यु का समाचार मिला। मृत्यु के कारणों ने उसे पागल बना दिया। मृत्यु के दिनों वह गर्भवती थी और जिस दिन उसकी मृत्यु हुई उस दिन एकादशी का दिन था। पेट के दर्द से घबरा कर उसने जल माँगा। सनातन धर्मी ससुर ने एकादशी व्रत भंग के कारण जल से उसे वंचित रखा और अन्त में यही धर्म-प्रेम उसके मृत्यु का कारण बना। अब सुशील के हृदय में दो प्रश्न उठे। समाज के कष्टों को दूर करे अथवा पहिले व्यापारियों की लूट से भारत की रक्षा। कभी समाज के अन्धेपन पर उसे क्रोध आता

और कभी परदेशी व्यापारियों की लूट पर दाँत पीसता। उसके हृदय में विद्रोह की अग्नि सुलग उठी। नवाब की बेवकूफी पर भी उसे कम गुस्सा न आता। लेकिन जब वह भारत की दयनीय दुर्दशा की ओर निगाह डालता तो ठण्ढी श्वाँस लेकर गर्म-गर्म आँसू बहा देता। वह १६ वर्ष की भरी जवानी में सुख और विषय-भोग से उदासीन हो गया। उसने घर की सब वस्तुयें जुलाहों को भेंट कर दी। राजसी कपड़े उतार फेंके। सन् १७६९ ई० में कई मास तक वह एक नदी के किनारे बैठा रहा। उसके बाल बढ़ गये थे। पैरों में रक्षा के लिये कोई वस्तु न थी। गले में था कुर्त्ता, बगल में कम्बल और हृदय में था दर्द और प्रेम। उसने समाज का कार्य दूसरों पर छोड़ कर राजनीतिक सुधार का बीड़ा उठाया। वही सुबोध अब बदल गया। वह तरुण तापसी निर्धनों की आँखों का तारा है और परदेशियों के हृदय का शूल।

———

धर्म-दृष्टि

आयरलैंड के पूर्वीय भाग में कैएटन नाम का एक नगर है। जिन दिनों वह प्रदेश पूर्णतया इङ्गलैंड के अधीन था और समस्त आयरलैंड में स्वतन्त्रता के लिये युद्ध लड़ा जा रहा था, इस नगर में कुछ जीवन न था। वहाँ के नागरिक अपने प्राणों की रक्षा के लिये, परदेशियों के पैर पूजना तो दूर और भी जघन्य कार्य करने को प्रस्तुत रहते। एक समय की बात है कि डब्लिन की क्रान्तिकारिणी कमेटी की ओर से एक परचा 'रण-निमन्त्रण' निकला, जिसमें अंग्रेजों के अत्याचारों का भण्डाफोड़ था और साथ ही उसके प्रतिकार के लिये नवयुवकों को गुप्त समिति में सहयोग देने का निमन्त्रण भी था। उसमें यह भी दिखलाया गया था कि किसी देश में जब खुले आन्दोलनों के चलाने में पग-पग पर रुकावट डाली जाती है तो वहाँ गुप्त रूप से कार्य करना उचित और अनिवार्य हो जाता है। इस परचे के निकले चार दिन भी नहीं गुजरे थे कि वहाँ की सरकार की ओर से वह परचा जब्त कर लिया गया। डब्लिन के स्कूल में एक लड़का पढ़ता था, जिसका नाम था ग्रेहम। वह कैएटन नगर का ही निवासी था। यद्यपि अभी उसकी आयु १८ वर्ष से अधिक न थी; किन्तु उसके हृदय में रह-रह कर यह प्रश्न उठ खड़ा होता कि देश के स्वातन्त्र्य-युद्ध

में हमारा कैण्टन इतना उदासीन क्यों है ? इस युद्ध में योग देना अधिक श्रेयस्कर है अथवा विद्याध्ययन करना। इस घटना के चौथे दिन सरकार ने सन्देह में इसी स्कूल के कई विद्यार्थियों को गिरफ्तार किया और उनको वर्षों के लिये जेल में डाल दिया। अब ग्रेहम के लिये सोचने योग्य कोई बात न रही। उसे जो निश्चय करना था उसने कर लिया। वह वहाँ से चल दिया।

+ × ÷

ग्रेहम ने स्कूल से पढ़ना छोड़ दिया और घर पहुँचा। उसके हृदय में एक चिन्ता थी कि कैण्टन में राष्ट्रीयता का कैसे प्रचार हो और कैसे यह नगर राष्ट्र के स्वातन्त्र्य-युद्ध का एक आवश्यक अंग बने। इन्हीं दिनों डब्लिन के अंग्रेज अधिकारियों को कैण्टन में विद्रोहात्मक भावना की लहर उमड़ती दीख पड़ी फलतः एक सेना ने आकर बड़े बड़े घरों की तलाशियाँ लेकर अनेक राजभक्तों को अपमानित किया। अब ग्रेहम के विचारों को मार्ग मिल गया। उसने सोचा यही अवसर है, जब कि नवयुवकों में देशाभिमान भरा जा सकता है। वह अपने को समिति क सदस्य बनाने के अभिप्राय से डब्लिन, बोरेस्ट आदि कई स्थानों पर गया। किन्तु यकायक किसी पर विश्वास न करने के नियम के कारण, गुप्त दल वालों ने दल में नहीं किया। उसने निश्चय किया कि कर्तव्य और कार्य ही विश्वास करने के लिये प्रमाण है। व घर लौट आया और अपने गाँव में ही तीन नवयुवकों को अपने साथ लेकर विद्रोह के कार्य को सफल बनाने में जुट गया। उसी गाँव में एक गिरजा-घर था, जिसके पादरी

हेमिल्टन यद्यपि आचरण-भ्रष्ट न थे, किन्तु वह परदेशी सरकार का गीत गाने और देश के लिये विद्रोह करने वालों को धर्म विरुद्ध घोषित करने से कभी न थकते थे। उन्होंने इस बार भी सरकार द्वारा किये गये अन्यायों को धर्म-दृष्टि से उचित घोषित किया।

× + ×

ग्रेहम ने कहा—"मित्र पोलक! पादरी हेमिल्टन को दण्ड देने के लिये क्या करना चाहिये?" पोलक ने उत्तर दिया—"मैं तो किसी भी देश-रिपु को दण्ड देने में नहीं हिचकता, किन्तु हेमिल्टन तो आखिर पादरी है और धर्म-दृष्टि से उसका कार्य उचित कहा जा रहा है।" ग्रेहम की आँखें लाल हो गईं। बोला—"पोलक! सचमुच तुम निरे बच्चे हो। धर्म क्या किसी जन समुदाय पर किये गये अत्याचारों का समर्थन कर सकता है? वह धर्म ही जो लाखों प्राणियों को अपने एक इशारे पर दिन दहाड़े लुटवा दे, बेइज्जत करवा दे। निरपराध सताना क्या न्यायानुकूल है?" कुछ क्षण रुक कर ग्रेहम ने पुनः कहा—"पोलक! जानते हो किसी देश को गुलाम बनाये रखने के लिये स्वार्थी, धर्म का ढोल पीटते हैं। जो स्वयं धर्म-पतित हैं उसे धर्म की दुहाई देने का अधिकार ही क्या है। जाओ, मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ कि हेमिल्टन का वध कर दो। बोलो क्या कहते हो?" पोलक ने इसका उत्तर नहीं दिया। कदाचित् वह मन ही मन ग्रेहम के शब्दों पर विचार कर रहा था। इतने में मिस जिबेथ ने आगे बढ़ कर कहा—"बन्धु ग्रेहम! तुम मेरे धर्म-बन्धु हो। यद्यपि पादरी हेमिल्टन मेरे पिता हैं। किन्तु धर्म की ओट में उनके धर्म-द्रोही

कार्य का समर्थन मैं नहीं कर सकती। मैं स्वयं उनका बध करने को प्रस्तुत हूँ। ग्रेहम आवाक् रह गया। मिस जिबेथ को एकाएक यहाँ देखकर वह सोच रहा था कि यह कहाँ से आ पहुँची और इसका आना कितना भयानक अहितकार होगा, किन्तु मिस जिबेथ की बातें सुनकर वह उसे आश्चर्य और प्रेमभरी दृष्टि से देखने लगा। पोलक की भी आँखें खुल गईं। समझ गया कि धर्म की दुहाई देने वाले अधिकारियों का वध करन कोई पाप नहीं।

× × ×

होमिल्टन की हत्या के बाद से, कैप्टन सरकारी सेना का केन्द्र सा बन गया। वह गिरजा घर इन दिनों ईश्वर या पादरियों के रहने का स्थान नहीं है, वहाँ महाप्रभु सरकार के गण निवास करते हैं। कैप्टन की गुप्त समिति में अस्त्रों की कमी थी। गिरिजा घर को डायनामाइट से उड़ा देने और वहाँ के सैनिकों का बध कर देने से काफी युद्ध सामग्री प्राप्त हो सकेगी। ऐसा ही किया गया। दूसरे रविवार को सन्ध्या की प्रार्थना के बाद एक स्वयंसैनिक ने गिरजाघर पर एक बम फेंका। सरकारी सेना के सिपाही अपनी रक्षा का स्थान खोजने लगे। इतने में दूसरे स्वयं सैनिकों ने पहुँच कर सारा माल असबाब लूट लिया। जब यह समाचार डब्लिन पहुँचा तो वहाँ से एक वृहद् सेना दमन करने के लिये भेजी गयी। उसने आते ही ग्रेहम, पोलक आदि के मकान पर छापा मारा। जब यह लोग सेना के हाथों न लगे तो सेना ने उनके परिवारों का बध करवा दिया। मिस जिबेथ ने बड़े दुखद शब्दों में यह सम्बाद जाकर

ग्रेहम को दिया। बहन! स्वतन्त्रता कोई सस्ती वस्तु नहीं है। इसके मूल्य में सर्वस्व देना ही पड़ता है। कैण्टन के हत्या-काण्ड से आयरलैंड में उत्तेजना फैल गयी। डब्लिन की गुप्त समति के सदस्य ग्रेहम के पास पहुँचे। उन्होंने उसे देखकर पूछा, मैंने तुमको नहीं देखा है। ग्रेहम ने मुस्करा कर उत्तर दिया—'अवश्य, मैं वही हूँ जो एक वर्ष पूर्व अपरिचित समझा गया था। मुझसे अपना विश्वास दिलाने के लिये कहा गया था। डब्लिन के प्रतिनिधि ने ग्रेहम को छाती से लगा कर कहा कि वस्तुतः सच्चा प्रमाण अथक कार्य करना ही है। इस घटना से दस वर्ष तक लगातार आयरलैंड का स्वातन्त्र्य-युद्ध जारी रहा और वह कैण्टन नगर उस आन्दोलन का मुख्य अंग रहा।

—:*:—

संकल्प

'ऐं ! आज नींद क्यों नहीं आती ? सारा शरीर किसी भावी आशंका से व्यथित हो रहा है। वह कौन सी आशंका है ? यह भी कुछ समझ में नहीं आता। दिन भर आखेट में घूमने की थकावट होने पर भी इन मखमली गद्दों पर लेटने को जी नहीं चाहता। सारा नगर, राजमहल और रनिवास सूनसान है। सभी प्राणी निस्तब्ध हैं। किन्तु मेरे हृदय में जाने क्यों एक विचित्र ढंग का कोलाहल है। अन्तःकरण में मनोभावों का उपद्रव मचा हुआ है। शरीर भी वेदनायुक्त है। किन्तु यह वेदना तो शर्म की थकावट से भिन्न है। यह कोलाहल कैसा ? ओह, उपद्रव ! कैसा उपद्रव और इसका कारण ? कुछ भी तो समझ में नहीं आता। यह रोशनी कैसी ? मेरे शयनागर में अर्धरात्रि के समय कौन प्रवेश-कर रहा है। परन्तु द्वार तो बन्द है। ऐं, उजाला तो बढ़ता ही जाता है और वह मेरी ही ओर बढ़ता-सा जान पड़ता है। मैं सोता हुआ स्वप्न तो नहीं देख रहा हूँ ?' नवयुवक ने चुटकी से अपनी जाँघों को मसला, शायद इसलिये कि परीक्षा कर ले कि वह सो रहा है अथवा जाग रहा है। चुटकी काटने पर उसे जागृति का विश्वास हो गया। वह पुनः बोला—"मैं चेतना-हीन तो नहीं हूँ फिर भी यह आश्चर्य-युक्त स्वप्न सा देख रहा हूँ ? इस इन्द्रजाल से मैं भयभीत हो रहा हूँ। त्राहिमाम् ! एकलिंग जी त्राहिमाम् !! युवक पृथ्वी पर गिर पड़ा।

× × ×

राजपूताने के प्रसिद्ध राज्य चित्तौड़ पर अकबर ने आक्रमण किया था। उस समय वहाँ के अधिपति उदयसिंह ने स्वर्गवासी वीर पिता संग्रामसिंह का अनुकरण नहीं किया। जिस कारण सांगा ने अपनी प्यारी मातृ-भूमि की रक्षा के लिये थोड़े से इने-गिने राजपूतों सहित युद्ध-क्षेत्र से पग पीछे नहीं हटाया, शरीर पर छोटे-बड़े मिलाकर अस्सी घाव खाये; जिसको परास्त करने के लिये पराक्रमी बाबर को अपनी प्रिय वस्तु—मदिरा का त्याग करना पड़ा, तपस्या करनी पड़ी और मिन्नतें माननी पड़ीं, उस प्रातः स्मरणीय सांगा के इकलौते पुत्र उदयसिंह ने गढ़ पर आक्रमण होते देख कायरता का आश्रय लिया। उस समय स्वामि-भक्त जयमाल के सामने दो प्रश्न थे—वह अपने स्वामी की रक्षा के लिये उसके साथ रहे अथवा स्वामी तथा अपनी मातृ-भूमि की रक्षा के लिये चित्तौड़ में। किन्तु वह वीर था, वह मनुष्य नहीं देवता था। वह अपने आराध्य देव का भक्त ही नहीं, पुजारी भी था। गढ़ के फाटक को बन्द करवा, उसने युद्धारम्भ कर दिया। अपरमित मुगल सेना के सामने राजपूती सेना क्रमशः नष्ट होने लगी। किन्तु, जयमाल निर्भय था, सामने मृत्यु की विकराल जीभ लपलपा रही थी और वह मुस्करा रहा था। दिन भर के आक्रमण से जो छेद कोट पर हो गये थे, रात में उन्हीं को वह स्वयं बन्द कर रहा था। इतने में शत्रु की गोली, वीर जयमाल की जय, कहती हुई आई और जयमाल के शरीर के साथ सती हो गई। फिर क्या था, मुगलों का झण्डा चित्तौड़ पर फहराने लगा।

\+ \+ \+

उपर्युक्त घटना को १० वर्ष बीत गये। टूटे-फूटे, भांय-भांय करते हुए किले पर हरा झण्डा उड़ रहा है। राणा उदयसिंह के परिवार का डेरा-डन्डा राज्य के दूसरे नगर में पड़ा है। राणा प्रतापसिंह इन दिनों उस राज्य के अधिपति हैं और उन्होंने उस नये बसे हुए नगर का नाम उदयपुर रखा है। राणा प्रतापसिंह को शिकार का बड़ा शौक है। वे अपना बरछा और धनुष बाण लिये कभी कभी कभी तो अकेले ही ही राजधानी से दूर जंगलों तक चले जाते हैं। राज-काज के सिवा यह उनका नित्य का काम है। नगरवासी राजपूतगण राज-प्रणाली से प्रसन्न हैं, तथापि अपने पूर्व स्थान चित्तौड़ के छूटने के कारण दुखी रहते हैं। आज उस वीर जयमाल का स्मृति-दिवस है, जिसने १० वर्ष पूर्व अपनी मातृ-भूमि की रक्षा में प्राण अर्पण किये थे। राणा प्रताप आज भी नियमानुकूल आखेट को गये थे। लौटने पर यद्यपि वह बहुत थके थे, तथापि जाने क्यों रात को नींद नहीं आई।

× + ×

भय करते हो, मुझे देख कर!—उस प्रकाश से शब्द हुआ और वह क्रमशः बढ़ने लगा। प्रताप ने अपनी आँखें बन्द कर लीं। उस दिव्य ज्योति से पुनः शब्द प्रकट हुए—प्रताप! आँखें बन्द करके भी तुम मुझसे छुट्टी नहीं पा सकते, मैं प्रति क्षण तुम्हारे साथ हूँ। तुम मुझसे दूर रह कर अपना निर्वाह नहीं कर सकते। तुम्हारे एकलिंग जी भी, जो तुम्हारे इष्ट देव हैं, मृत्युलोक में हमारे ही आश्रित हैं। पुराणों में जिसको रिद्धि और सिद्धि कहते हैं वे हमारे गर्भ से उत्पन्न हुई कन्यायें हैं। कल्याण-

कारी शिव हमारी करुणा का नाम है। पालनहारे ब्रह्मा हमारे स्वभाव को कहते हैं और प्रलय है हमारा क्रोध। बोलो, तुम भला हमसे छूट सकते हो?

प्रताप ने आँखें खोल दीं। दोनों हाथ जोड़ कर उठ खड़ा हुआ और उस दिव्य प्रकाश को साष्टांग नमस्कार करने लगा। इस बार उसने जो आँखें खोलीं तो उस शयनागर में एक अत्यन्त सुन्दर स्त्री को मलिन और कृष वस्त्रों से आच्छादित देखा। प्रताप घबरा गया। स्त्री की ओर मुड़ कर उसने प्रश्न किया--"तुम कौन हो?"

स्त्री ने कहा—"नहीं पहचानते हो प्रताप! मैं तुम्हारा पोषण करने वाली माता हूँ।" घबरा कर प्रताप ने प्रश्न किया--"इतनी रात को तुम हमारे एकान्त शयनागर में कैसे?" स्त्री ने इसका कुछ भी उत्तर नहीं दिया।

× × ×

"आखिर रोती क्यों हो माँ!" प्रताप ने प्रश्न किया। कुछ उत्ते-जित होकर उस स्त्री ने उत्तर दिया—"तुम्हारे कार्यों पर। तुम मुझे पहचानते भी नहीं?" प्रताप कुछ कहना ही चाहता था कि उसके कमरे में कई मनुष्य दिखलाई दिये जो कपड़े खींच कर और डण्डों के प्रहार से उस स्त्री पर आक्रमण करने लगे। प्रताप ने आश्चर्य चकित होकर प्रश्न किया—"यह क्या मामला है, कुछ समझ में नहीं आता।" स्त्री ने कहा—"लो मामला समझो। मैं वही दिव्य प्रकाश हूँ, जिसे तुमने अभी देखा है। मैं तुम्हारी माता से भी बड़ी चित्तौड़ की मातृ-भूमि हूँ, मैं भारत-भूमि हूँ, मैं पालनकर्त्री अन्नपूर्णा हूँ, मैं सरस्वती हूँ। मेरी

रक्षा के लिये प्राण देने वाले सांगा और जयमाल की संताप-भूमि हूँ, राम-कृष्ण की स्वर्ग भूमि हूँ! प्रताप! तुम्हें अपनी माता पर इस प्रकार अमानुषिक अत्याचार देख कर लज्जा नहीं आती? क्रोध नहीं आता?"

प्रताप ने माता को नमस्कार किया—और शत्रुओं को मारने के लिये ज्योंही म्यान से तलवार खींची तो देखा कि वहाँ कोई नहीं। कुछ क्षण इस घटनाचक्र पर विचार कर उसने कहा—"आज बीर जयमाल की पुण्य स्मृति का दिन है। अतः ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि विभिन्न देव नाम धारिणी मातृभूमि, तेरी ही शपथ खा कर संकल्प करता हूँ कि जब तक मैं मातृ-भूमि का उद्धार न कर लूँगा तब तक, न सोने-चाँदी के बरतन में भोजन करूँगा और न चारपाई पर सोऊँगा और उस मातृ-सेवक की मूछों पर हाथ फेरने पर लानत है, जिसका देश पराधीन हो। अतः अब आज से मैं मूँछ पर ताव नहीं दूँगा।

—:*:—

बलिदान

उस बूढ़े की आँखों में तेज था। उसने अकबर की ओर देखा। दोनों की आँखें चार हुईं। सांकेतिक शब्दों में दोनों के भाव एक दूसरे पर प्रकट हो गये। कुछ समय तक निस्तब्धता रही। इतने में दरवान ने आकर प्रार्थना की—जहाँपनाह! फैजी साहब आ रहे हैं। बात कहने की देर थी, फैजी खुद ही आ गये। उन्होंने आते ही कहा—'गरीब परवर! आपने अहमद नगर के हमले के बारे में क्या तय किया है?' बूढ़े ने फैजी की ओर देखा और फिर कहा—'बादशाह सलामत तो इन दिनों हिर्ष की दरिया में गोते लगा रहे हैं। उनकी अक्ल पर मुल्क रानी का पर्दा पड़ गया है। फैजी! तुम्हारे खयाल से भी क्या अहमदनगर पर हमला करना दानिशमन्दी है? फैजी ने इसका कुछ उत्तर नहीं दिया। बूढ़े ने पुनः प्रश्न किया—'फैजी जो शख्स रुपये के खातिर अपने जमीन का खून करता है या जर के लालच में अपनी दूरन्देशी और काबलियत से दस्तबरदार हो जाता है या अपने आका को आफते-नागहानी से आगाह नहीं करता, वह अपना ही नुकसान करता है। बादशाह ने आँखें उपर उठाईं और फैजी से कहा—'दोस्त फैजी! सख्त कस-मकस में पड़ा हूँ। महात्मा जी की सलाह है कि मैं अहमद नगर पर हमला न करूँ।

आप की इसपर क्या राय है? आप न सिर्फ मेरी हुकूमत के कारबरदाज हैं बल्कि एक दोस्त भी हैं।

\+ \+ \+

दूसरे दिन अकबर के दरबार में सभी दरबारी जमा हुए। अहमद नगर पर चढ़ाई की जाय या न की जाय? यही एक प्रश्न हल करना आज के दरबार का काम था। एक हिन्दू सन्यासी ने मुख्य दरबारियों से मिल कर इस विषय की चर्चा की और अपनी ओर से यह सलाह दी थी कि बादशाह को पहले चाहिये कि अपने अधीनस्थ प्रदेशों की अशान्ति दूर करें। असंतोष के कारण का पता लगायें, उसे नाश करें। जब इतना काम समाप्त हो जाय, तब उसके बाद जिस प्रदेश का शासक अपनी प्रजा को कष्ट देता हो, उस पर चढ़ाई करने का आयोजन करें। ऐसा न करके अभी ही चढ़ाई करने से अकबर को क्षति पहुँचेगी। मेवाड़ पर आक्रमण करके अकबर ने कुछ फल नहीं पाया, वीर श्रेष्ठ महाराणाप्रताप को अपना शत्रु अवश्य ही बना लिया। याद रखना, यदि अहमद नगरपर अकबर ने धावा किया तो वहाँ के वीर पठान भी सहज ही में किले पर अधिकार न होने देंगे। महात्मा जी की बातों से प्रभावित होकर बहुत दरबारी युद्ध के विरुद्ध हो गये। अकबर जो कुछ करता था अपने साथियों और दरबारि-यों की सलाह लेकर ही। दरबार में युद्ध का प्रस्ताव रखा गया। यद्यपि बादशाह स्वयं भी महात्मा जी के आदेश से प्रभावित हो गये थे, किन्तु

अन्य दरबारियों ने बहुमत से युद्ध करना ही तय किया। सन्ध्या समय बिगुल बजा और सैनिकों को अहमदनगर पर अभियान की सूचना दे दी गयी।

× + ×

बहमनी राजवंश के नष्ट भ्रष्ट हो जाने के कारण दक्षिण का वह भाग अब पाँच भागों में विभक्त हो गया था। बीदर, बरार, गोलकुण्डा आदि शेष चार भागों की अपेक्षा अहमद नगर का भाग बड़ा तो था, किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से उसका महत्व कम भी न था। उन दिनों उस छोटे से राज्य की बागडोर एक मुस्लिम नारी-रत्न चाँद बीबी सुल्ताना के हाथ में थी। आराम-पसन्द मुसलमान कुल में जन्म लेकर भी वह क्षत्राणियों की भांति वीर थी। उसकी वेश-भूषा भी प्रायः वैसी ही रहती थी। मुगल वंश के अकबर की चढ़ाई की सूचना उससे छिपी न रह सकी। उसने भी अपने दरबारियों को किले में बुलाकर परामर्श किया। प्रायः लोगों ने यह राय दी कि किले की कुञ्जी अकबर को दे देनी चाहिये, क्योंकि भारत सम्राट् के सामने अहमद नगर की तुच्छ सेना रूई की भाँति उड़ जायगी। चाँद बीबी ने दरबारियों को उत्तर देते हुए कहा—'रियासत आप की है और उसे आप जिस किसी को चाहे दे सकते हैं। किन्तु, सुल्ताना अपने स्वाभिमान को परकीय के पैरों-तले रौंद जाने दे—क्या भारत के स्वाभिमानी जल-वायु में पली क्षत्राणियों की प्रकृति वाली तुर्क सुल्ताना, अबला की भाँति सर झुका दे—यह भी आप लोगों की

राय है ? दरबारियों ने मौन धारण कर लिया। उस दिन कुछ निश्चय न हो सका।

× × ×

दृढ़ प्रतिज्ञ अकबर की फौजें अहमद नगर के किले से दस कोस की दूरी तक आ गईं। छत पर चढ़ कर सुल्ताना ने दूर से चमकते हुए इस्लामी झंडे को देखा। वह अपने देश की चिन्ता से व्याकुल हो गई। रात ही को उसने प्रमुख दरबारियों को बुलाकर उनसे सलाह ली। धर्म के धुँधले संसार में विचरने वालों ने फतवा दिया कि इस्लाम के झण्डे के विरुद्ध शस्त्र लेकर निकलना, एक मुसलमान के लिये लज्जा की बात है। सुल्ताना ने गर्वीले शब्दों में कहा दिया—'यह प्रश्न धर्म का नहीं, यह है देश-रक्षा का सवाल ! इज्जत, आबरू और ईमान का सवाल !! यदि अहमद नगर के कोट पर इस्लाम का झण्डा गड़ा देख कर अकबर—भारत सम्राट अकबर—आक्रमण करता है, तो स्पष्ट है कि वह स्वार्थ और अभिमान में डूबा हुआ है। यदि इन परदेशियों को मजहब का प्रेम होता तो इब्राहीम लोदी के विरुद्ध बाबर फौजकशी करके सैकड़ों मुसलमान भाइयों का खून न बहाता। सिवाय इसके कि जब तक मैं सुल्तान हूँ, तब तक मेरा मजहब और धर्म इस्लाम की

खिदमत नहीं, बल्कि अपनी रियाया की—हिन्दू और मुसलमान रियाया की–खिदमत करना है। मैं हिन्दुस्तान में पैदा हुई हूँ, इसलिये हिन्दुस्तानी हूँ। दरबारियों पर सुल्ताना का कुछ असर न पड़ा।

× × ×

अकेली सुल्ताना थोड़ी-सी फौज लेकर वीर-वेश में स्वयं रण-भूमि में गई। मुगलों की फौज उस समय रण-भूमि से भाग खड़ी हुई और कुछ समय के लिये अहमद नगर अकबरी-साम्राज्य के चंगुल से बचा रहा, परन्तु सुल्ताना के दुर्दिन ने पीछा नहीं छोड़ा। एक दिन जब चाँद बीबी अपने कमरे में पड़ी सो रही थी, एक धर्मान्ध कठमुल्ले की प्रेरणा से एक फौजी अफसर ने इस वीरांगना के रक्त से मातृ-भूमि का अञ्चल सराबोर कर दिया। संसार ने उसकी हत्या का कारण 'फौजी' अफसर से अनुचित प्रेम घोषित कर उस पवित्र लाश को कलंकित किया। किन्तु उस मरती हुई महिला के उद्गार शयनागार की दीवारों को तोड़ कर पार कर गये। वे शब्द जिज्ञासुओं के कानों में आज भी गूँज रहे हैं। चाँद बीबी ने कहा था—'इस्लाम की वह गलत परिभाषा जो कठमुल्लों को धर्मान्ध बना चुकी है, हमें सिखाती है कि इस्लाम की खिदमत मुल्क की ख़िदमत से अलग है, मैं यह नहीं मानती। परदेशी के मुकाबले में अपने देश का अन्य-धर्मी आदरणीय है, यह बात उस दिन हमारी समझ में यदि आ जाती जिस दिन चित्तौड़ का वीर प्रताप हल्दीघाटी में लड़ रहा था, तो आज एक पापी के हाथों

यह कायर मृत्यु मेरी कभी न होती। यह देह व्यर्थ जा रही है, इसका मुझे इसीलिये दुःख है। वैसे तो आज भी शरीर उसी को भेंट हुआ जिसके लिये प्रण कर रखा था।'

—:*:—

मायाजाल

उसने भी अच्छे दिन देखे थे। रास्ते में जब कभी वह निकल जाता था तो लोग ताजीम के लिये खड़े हो जाते थे। उसके चेहरे पर शिकनें तब भी थीं, किन्तु उसके 'तब में और अब में, बड़ा अन्तर है— उतना ही अन्तर, जितना कि आकाश और पाताल में, नौकरशाही और अनारकिस्टों में। वह तब—हाथीनशीन था, आज उसके बैठने के लिये नंगी जमीन का भी टिकाना नहीं। तब उसके किसी के महल या किसी के झोपड़ी में पहुँच जाने पर महल की—झोपड़ी की शोभा बन जाती थी, उसके भाग्य खुल जाते थे। आज, इसके निकल जाने से गलियाँ विना उठती हैं, लोग मुँह फेर लेते हैं। चलते में वह कभी-कभी हँस देता है, उसकी हँसी में करुणरस का मिश्रण होता है। फिर भी छोटे-छोटे बच्चे उसकी हँसी से काँप जाते हैं, रास्ता छोड़ कर भाग जाते हैं। उसको अब लोग बुधुवा कहकर पुकारते हैं। जब कोई उसको 'अबे बुधुवा' कह कर बुला देता है, तो मानों उसे द्रव्य मिल जाता है। वह 'सरकार' कह कर बड़े ही अदब से रुक कर खड़ा हो जाता है। उसके हृदय में आशा की तरंगें उठने लगती हैं और बाँध तोड़ कर आँखों के मार्ग से उस पुकारने वाले के सामने नाचने

लगती हैं। बुधुवा गाँव में मेहनत-मजूरी करता और उसी से अपने 'पापी पेट' को भरा करता है।

× × ×

उसी गाँव में एक जमींदार रहते थे। उनका नाम था मुन्शी शिवरतन लाल। जात के वह कायस्थ थे। उनकी जवानी उनसे जाने के लिए बार-बार छान-पगहा तुड़ाती थी, किन्तु वह उसे जाने न देते थे। उसके लिये खिजाब का सेवन करते थे, दाँतों में उन्होंने महीन तारों का घेरा डाल रखा था, साधारणतः तार किसी को दिखाई न देते थे। वह प्रायः कहा करते—'बचपन की बीमारी ने मुझे कहीं का न रखा, दाँत हिला दिये, बाल सफेद कर दिये। उस जमाने की आई हुई कमजोरी आज तक पूरी न हुई।' पास बैठने वाले सब उनकी हाँ में हाँ जरूर मिला देते थे। गाँव के जवानों की भाषा में वह भले आदमी थे। गाँव में कोई चोरी हो जाती, किसी प्रकार का बखेड़ा होता, पुलिस का दारोगा आता तो मुन्शी जी कुछ ले-दे के तस्फिया करा देते। किन्तु न जाने क्यों गाँव के बूढ़े बेचारे से खफा थे। कहते—'यह पुलिस का मुखबिर है, दलाल है।' किन्तु खुले तरीके से वह भी बुरा न मानते थे। मुन्शी जी वेश्या-गामी नहीं थे, कभी-कभी वेश्यायें उन्हें स्वयं सलाम करने आ जाती थीं। वे शराब भी नहीं पीते थे, लेकिन बच्चों की दवा तथा आने-जाने वालों की मेहमानी के लिये दो-एक बोतल डाल रखते थे। बुधुवा उन्हीं के दरवाजे पर बैठा, आशा की डोरी का ताना-बाना बुना करता था। उस समय

उसके मुख-मण्डल पर विचित्र प्रकार का ज्वारभाटा आता था, किन्तु वह जो कुछ सोच रहा था, उसी में मस्त था।

× ÷ ×

वह महँगी के दिन थे। किसी को रोटी देना साधारण बात न थी। कोई किसी का नहीं था। ऐसे समय बुधुवा मुन्शी जी के दरवाजे नौकरी की आशा में बैठा था। भीख माँगता था, पर भीख से उसे कुछ मिलता न था। शायद वह सन्तोषी न था, इसलिये पेट भर रोटी के लिये नौकरी की खोज में था। वह पेट भर रोटी चाहता था, किन्तु पेट भर रोटी—बड़ी मुश्किल की बात थी। उस जमाने में सभी को अपनी अपनी पड़ी थी। मुन्शी जी उदार थे। उन्होंने बुधुवा को पेट भर रोटी देने का वचन दिया। बुधुवा उनके दरवाजे पड़ा रहता और जब मुन्शी जी कहीं गाँव गिराँव जाते तो, लाठी लेकर उनके साथ हो जाता। बाजार जाकर सौदा ला देता, आसामी को बुला लाता, मुन्शी जी के थके होने पर हाथ-पैर दबा देता। कुआँ दरवाजे पर ही था, स्त्रियाँ बेचारी पर्दा-नशीन थीं। इसलिये पानी भी भर देता। बस, इतना ही उसका काम था। उसको खाना ठीक समय पर—दोपहर को २-२॥ बजे और सन्ध्या को ११-१२ बजे मिल जाता था। वह मुन्शी जी के यहाँ चैन से था। एक वर्ष हो गया। इन दिनों बुधुवा की मुन्शी जी के दरबार में बड़ी पूछ है, वह प्रत्येक काम में उससे राय लेते हों या न लेते हों, किन्तु बुधुवा को हर वक्त रखते अपने साथ ही हैं।

+ × +

इधर १०-१५ दिनों से मुन्शी जी बुधुवा से नाखुश हैं। अपने पास बैठनेवालों से वह कहते हैं–'बुधुवा को रोटी लग गई है। देखते नहीं हो, कितना मोटा हो गया है। आया तब कितना सीधा था। अनाज सस्ता हो गया है न, तभी तो अब आँखों में चर्बी छा गई है। किसी काम को कहो सुनता नहो, बहका बहका जाता है।' बुधुवा भी इन दिनों कुछ चिन्तित सा रहता था। एक दिन रात वह अपनी टूटी चटाई पर पड़ा हुआ कुछ सोच रहा था, शायद अतीत की बातें। इतने में मुन्शी जो अन्दर से निकले। ठोकर मार कर बोले—"हरामजादे! अभी गया नहीं?" बुधुवा उठ कर खड़ा हो गया। वह गया नहीं, खड़ा रहा। अबकी बार मुन्शी जी का पारा और भी गरम हो उठा। वे कहने लगे—"सूरतहराम! बोल, जायगा या नहीं?" इस बार बुधुवा ने साहस करके उत्तर दिया—"सरकार मैं यह काम नहीं कर सकता।" "तेरी यह हिम्मत! काम से इनकारी!! गुस्ताख!!!" और इतना कह कर लगे तमाचे मारने।

"मारडालो सरकार! लेकिन यह कुकर्म नहीं हो सकता। बदमाश मालिकका हुक्म मानना कुकर्म है? हुजूर का हुक्म मानना कुकर्म नहीं है, लेकिन जो हुक्म सरकार ने दिया है, वह पाप है।"

"क्या" मुन्शी जी ने लाल लाल आँखें निकाल कर पूछा।

"किसी की बहू-बेटी को बुरी निगाह से देखना पाप नहीं तो क्या पुण्य है?" बुधुवा ने साहस करके कहा—'आपके धोखे में पड़ कर मैंने क्या नहीं किया? न जाने कितनों को चोरी में सजा करवाई, एक बैल स्वयं बदल कर पुलिस के जरिये उनकी बेइज्जती कराई। मकानों में आग लगाई। बेकसूरों को पीटा–सताया...'

उसकी आँखों से आँसू निकल रहे थे, वह इसके आगे और कुछ कह न सका।

× = +

बुधुवा हवालात में बन्द हो गया। उसपर अपने मालिक (मुन्शी जी) के घर चोरी करके माल ले भागने का आरोप है। मुकदमे की पेशी हुई तो उसे छः मास की सजा मिल गई। जैसे-तैसे उसने दिन काटे। गाँव वालों को अब मानों, उसके प्रति सहानुभूति थी। किन्तु, किसी ने उससे कुछ पूछा नहीं, मानों कभी देखा न हो। कदाचित् मुन्शी जी के भय से वह अपनी झोपड़ी के पास गया, अब वहाँ उसका कोई चिन्ह शेष न था। एक मात्र बरगद का पेड़ खड़ा था। वह वहीं बैठ गया। उसने अपने जीवन का सिंहावलोकन किया। जब मैं रईस था, अत्याचार करता था, दुराचार करता था, लोग मेरा आदर करते थे। आज मुन्शी जी का भी आदर करते हैं। वह लाख अवगुणों की खान हैं, किन्तु अमीर तो हैं। मैं ईश्वर से डरने लगा, तो मान से गया और लक्ष्मी ने भी रास्ता लिया। कलयुग में लक्ष्मी भी पतिभक्त नहीं रहीं। यह कैसा माया जाल है? लोग पाप-पुण्य जानते हैं, समझते हैं, किन्तु साहस करके स्पष्ट नहीं

कह सकते........। बुधुवा उठा और न जाने कहाँ चला गया। सुनते हैं, वह अब अनेक स्थानों में भ्रमण करता हुआ पूंजीवाद के विरुद्ध प्रचार करता फिरता है।

—:*:—

समर्पण !

वह दिन आज ही का-सा था, जब आकाश में उठे हुये मेघों ने पृथ्वी पर पड़े हुए एक गरीब परिवार से गरज कर कहा था—"तुम्हारे लिये संसार में स्थान नहीं है।" तीन दिन से भूदेव परिवार को, सन्तोष दिलाने के बदले संसार के बड़े हुये प्राणियों की भाँति मेघराज ने भी सताने पर कमर बाँध ली ! आँसुओं से भींगे हुए वस्त्रों को उन मेघों ने निर्दयता से सराबोर कर दिया था ! तब सर्दी से कटकटाते हुए परिवार ने अपनी टूटी झोपड़ी के एक कोने में शरीर की रक्षा करनी चाही थी। अत्याचारी शासकों की भाँति पूँजीपति-वायु भी मेघों की सहायता के लिये अपनी सेना लेकर सनसन अस्त्र छोड़ने लगी थी। बेचारे अन्न-वस्त्र-विहीन परिवार की टूटी झोपड़ी उसके तीखे तारों से तहस-नहस हो गई। तब उस बरसते हुये, मूसलाधार पानी में उस गरीब ने सामने के चौपाल में भाग कर प्राण-रक्षा करनी चाही थी। ओफ ! आठ बरस बीत जाने पर भी हमें जैसा का तैसा हो याद है कि जमींदार ने उसे आश्रय देना तो दूर, उलटे उससे लगान का तकाजा किया था।

घण्टों बरसते पानी में खड़ा रह कर, जब उससे कुछ न पाया तो मदाखलत-बेजा के अपराध में पुलिस के हवाले कर दिया और आठ दिन बाद अमीरों के टुकड़ों पर नाचने वाली पुलिस की रिपोर्ट पर, उस अक्ल के अन्धे हृदय-हीन मजिस्ट्रेट ने उसपर २००) जुर्माने का दण्ड ठोक दिया।

× × ×

उस समय उस निरपराध बन्दी का हृदय क्या कहता होगा? ईश्वर के न्यायी और उसके अन्तर्यामी होने की बात पर, तभी तो उसने व्यंग की हँसी, हँसी थी। एक नहीं बीसियों और सैकड़ों मिसालें देकर उस रक्त-मांस विहीन पुरुष ने मानो आँखें फाड़ और डाँट कर हमसे कहा था—"धर्म और न्याय की खिल्ली न उड़ाओ। जब तक पूँजीपति और उनके पृष्ठ-पोषक शासकगण पृथ्वी-तल पर वर्तमान हैं, तब तक न्याय और धर्म कहने की चीजें हैं, करने की नहीं।" उसी दिन उसके बात पर हमें भी हँसी आई थी; किन्तु वह हँसी करुणा की थी। तब हमने अपने मन को यह कह कर समझा लिया था कि बहुत कष्ट भोगने के कारण इस मनुष्य की विवेक-शक्ति नष्ट हो गई है। किन्तु, महन्तों और मठा-धीशों के उपदेश ने उस दिन आँखें खोल दीं। यह धर्म और सदुपदेशों के ठेकेदार बनने वाले एजेण्ट, अपने सिर में लम्बी जटाओं के भीतर पूँजीवाद को समेटे बैठे हैं। सचमुच, इनके कपड़े गरीबों के रक्त से रँगे हुए हैं और घुटी हुई खोपड़ी के साथ साथ, न्याय और विवेक से भी अपना नाता तोड़ चुके हैं। मन्दिर, मस्जिद, गिरजा और ठाकुरद्वारों में भी तो ईश्वर के स्थान पर, किंग की तस्वीर पर ढले हुए चाँदी और

ताँबे के टुकड़ों का ही बोल-बाला है। और उस दिन हमने उद्धारकों पर भी उसी पूँजीवाद का भूत देखा, तब तो मेरे मुख से अनायास निकल गया "उस गरीब प्राणी की बात इनकी जानकारी से भी अधिक सत्य है।"

= = =

किन्तु, उस गरीब परिवार के कष्टों से मेरे हृदय पर धक्का क्यों लगता है? रह-रह कर मेरे हृदय में टीस क्यों उठती है? मैं यह नहीं मान सकता कि हिमालय औ आराकान पर्वत से हिन्दूकुश तक करोड़ों प्राणियों के दुखी होने से ही मेरा अन्तःकरण हिल गया है। इन सबों से हमारा वास्ता? कोई रिश्तेदारी नहीं उनसे! वे दुःखी हैं बने रहें......। किन्तु यह मान लेने से तो मन नहीं मानता और मन के न मानने का कारण भी समझ में नहीं आता। कोई कहता था कि ये सब हमारे भाई हैं। लेकिन...हाँ हाँ अवश्य हो यह सत्य है। एक ही पृथ्वी और जलवायु, हमारी रीति और सभ्यता, धर्म और भाषा की जननी है। काश्मीर से कन्या कुमारी, हिन्दूकुश से सुदूर आराकान पर्वत के बीच विचरण करने वाली भारत भूमि हमारी जननी है। 'आओ झुकायें सर को, भारत हमारी माँ है।' अब तो यह स्वाभाविक ही है कि इन सगे भाइयों के दुख में हमारे भी आँसू निकल पड़ें। भाइयों के कष्ट में सहायक होना कोई आश्चर्ययुक्त बात नहीं है, बल्कि ऐसा न करना ही अमानुषिक व्यवहार है। स्नेहमयी जननी का पाश

बनने के लिये आवश्यक है कि भाइयों के प्रति प्रेम हो। क्या यह सत्य है ?

= = =

वह उन्मत्त भावावेश में और भी न जाने क्या-क्या बकता रहा। उसने पुनः उस दिन की याद करके कहा—एक वह दिन था और एक आज का दिन है, ठीक आठ वर्ष हो गये, किन्तु प्रश्न उस दिन उठा था वह आज भी पत्थर की भाँति दृढ़ता से हमारे सामने खड़ा है। उन दिनों मैं सोच रहा था कि इन पीड़ित बन्धुओं के लिये क्या करूँ। संसार में आदि से विचरने वाले ही तीनों उपाय मेरे सामने आये और सबों ने अपनी ओर मेरा मन फेरने की कोशिश की। अनुनय-विनय, सम्बन्ध-विच्छेद और रक्त-पात, एक-एक करके सभी ने अपने-अपने गुणों की प्रशंसा की। अपनी सार्थकता प्रकट करने के लिये उदाहरण उपस्थित किये। रक्त-पात ने तो बड़ा ही जोर बाँधा, किन्तु मैं कुछ भी निश्चय न कर सका। उन्मत्त-सा कुछ समय तक मौन बैठा रहा। तत्पश्चात् वह उसी गाँव की ओर चल पड़ा, जहाँ के गरीब परिवार की करुण दशा ने उसे भावोन्मत्त कर दिया था। आज भी बूढ़े की झोपड़ी के पास वाला पेड़ वैसा ही खड़ा है, लेकिन झोपड़ी नहीं है। वहाँ पर जमींदार की मोटर रखने के लिये मोटर-गैरेज बना दिया गया है और वह परिवार अपने बाल-बच्चों के लिये उस पेड़ से कुछ दूर पर, झुरमुट में—एक छप्पर डाले पड़ा है। कितना निष्ठुर काल-चक्र !

× × ×

युवक उस झोपड़ी के पास गया तो उसने देखा कि बूढ़ा पृथ्वी पर पड़ा अपनी अंतिम साँसें पूरी कर रहा है और उसकी पत्नी उसके पास ही बैठी रोगी की अन्तिम घड़ियाँ गिन रही है और उसके बच्चे अलग अपने पेट के लिये तड़प रहे हैं। मनोहर ने यह दशा देखी। वह सहम कर एक किनारे खड़ा हो गया। स्त्री ने कहा—'मालिक दया करो, देख रहे हो हमारे जीवन की आशा, पति मर रहा है, बच्चे भूख से व्याकुल हैं और तुम बेगार लेने के लिये आये हो!' स्त्री आगे न कह सकी और मुर्छित हो कर गिर पड़ी। अब मनोहर ने समझा कि जो कुछ मैंने अभी तक समझा था, उससे भी आगे समझने की अभी गुञ्जाइश है। हृदय-हीन शासक और पूँजीपति, मृतकों की ठठरी पर अपना ताण्डव नृत्य करके आनन्द मनाते हैं। बूढ़े और उसकी स्त्री—दोनों ने दम तोड़ दिया। तब मनोहर पृथ्वी पर बैठ कर कहने लगा—'मातृभूमि! मैंने देखा, नित्य ही हमारे सैकड़ों भाई इसी प्रकार पूंजीपतियों के अत्याचार से मृत्यु की भेंट हो जाते हैं। उनसे रक्षा करने के लिये जो भी उपाय मैंने सोचे हैं, उनमें से किसी का भी पथिक होने के पूर्व, हे देवि! मैं अपने को तुम्हारे समक्ष 'समर्पण' करता हूँ। जिस प्रकार तुम्हारा काम हो और हमारा कल्याण हो, माँ उसी मार्ग पर चलाना और शरणागत की लाज रखना।' मृत देहों का उसने संस्कार किया और अभागे परिवार के बच्चों को लेकर चला गया।

—:*:—